विषयानुक्रमणिका ।

दशमपटले ।

इति दशमः पटलः समाप्तः ।

॥ श्रीः ॥

रावणकृतमुड्डीशतन्त्रम् ।

भाषाटीकासहितम्

प्रथमः पटलः ।

ग्रन्थावतरणिका ।
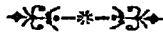
कैलाशशिखरे रम्ये नानारत्नोपशोभिते ।
नानाद्रुमलताकीर्णे नानापक्षि रवैर्युते ॥ १ ॥

अर्थ—एक समय कैलास पर्वतके शिखर पर—जो सर्वदा नाना प्रकारके रत्नोंसे सुशोभित हुआ करता है, जिस पर अनेक प्रकारकी लता और वृक्ष फैले रहते हैं तथा जिसके ऊपर अनेक प्रकारके पक्षियों का सुन्दर शब्द गुंजता रहता है ॥ १ ॥

सर्वर्तुकुसुमामोदमोदिते सुमनोहरे ।
शैत्यसौगन्ध्यमान्द्याढ्यैर्मरुद्भिरुपवीजिते ॥ २ ॥

अर्थ—जहाँ सब ऋतुओंमें नाना प्रकारके पुष्प विकसे रहते हैं और उनको स्पर्श करती हुई चित्तको प्रसन्न करनेवाली धीरे धीरे शीतल और सुगन्धित वायु वहती रहती है ॥ २ ॥

अप्सरोगणसङ्गीतकलध्वनिनिनादिते ।
स्थिरच्छायद्रुमच्छायाच्छादिते स्निग्धमंजुले ॥३॥

अर्थ—जिसपर सुंदर सुंदर वृक्ष की अविचल शीतल छाया बनी रहती है तथा अप्सरा ओं के मधुर मधुर स्वरके गान की ध्वनि होती रहती है ॥ ३ ॥

मत्तकोकिलसन्दोहसंघुष्टविपिनान्तरे ।
सर्वदा स्वगणैः सार्धम् ऋतुराजनिषेविते ॥४॥

अर्थ—जहाँ वटिकाओंमें झुण्डको झुण्ड मदोन्मत्त कोकिला बोलती रहती हैं और अपने अनुचरोंको साथमें लिये हुए ऋतु राज व वसन्त ऋतु सर्वदा जिसपर्वत की सेवा किया करता है ॥ ४ ॥

सिद्धचारणगंधर्वैं र्गाणपत्यगणै र्वृते ।
तत्र मौनधरं देवं चराचरजगद्गुरुम् ॥ ५ ॥

अर्थ—जहां सिद्ध, चारण और गन्धर्व आदि निवास करते हैं संसार भरके चराचर के गुरु श्री शिव जी महाराज मौन धारण किये हुए बैठे थे ॥ ५ ॥

सदाशिवं सदानन्दं करुणाऽमृतसागरम्।
कर्पूरकुन्दधवलं शुद्धसत्वमयं विभुम् ॥ ६ ॥

अर्थ—जो कल्याण करने वाले, सर्वदा आनन्दमय, करुणारूपी अमृतके समुद्र, पवित्र और शुद्ध स्वरूप हैं, कर्पूर और पुष्प के समान उज्ज्वल वर्णकी जिनकी शुद्ध शरीर है ॥ ६ ॥

दिगम्बरं दीननाथं योगीन्द्रं योगिवल्लभम्।
गंगाशीकरसंसिक्तं जटामण्डलमण्डितम् ॥ ७ ॥

अर्थ—दिशायें जिनका वस्त्र हैं, अनाथोंके नाथ, योगियोंमें श्रेष्ठ और जो योगियोंके वल्लभ अर्थात् प्रिय हैं, जिनकी जटाके मण्डलमें गंगाजी विहार करती रहती हैं और उन्हीं की धारा से जटा सुशोभीत रहती है ॥ ७ ॥

विभूतिभूषितं शान्तं व्यालमालं कपालिनम्।
त्रिलोचनं त्रिलोकेशं त्रिशूलवरधारिणम् ॥८॥

अर्थ—भस्म लगाये हुए, शान्त स्वभाव कण्ठमें सर्प और मुण्डकी माला पहिरे तीन नेत्र, तथा हाथमें श्रेष्ठ अर्थात् उत्तम त्रिशूल लिये हुए तीनों लोकके स्वामी ॥ ८ ॥

आशुतोषं ज्ञानमयं कैवल्यफलदायकम्।
निरान्तकं निर्विकल्पं निर्विशेषं निरंजनम् ॥९॥

अर्थ-जो शीघ्र मनोरथ पूर्ण करनेवाले, ज्ञानमय, कैवल्यफल को देने वाले, जिनका अन्त नहीं है, जो भेद भ्रम तथा तीनों तापों (दैहिक, दैविक, भौतिक) से रहित और निर्दोष है ॥९॥

सर्वेषां हितकर्तारं देवदेवं निरामयम् ।
अर्द्धचन्द्रोज्ज्वलद्भालं पञ्चवक्त्रं सुभूषितम् ॥१०॥

अर्थ-जो सबके हित करने वाले देवताओं के देव तथा रोग रहित हैं, जिनके मस्तक में उज्ज्वल अर्ध चन्द्र विभूषित है और जिनको पाँच मुख है ॥ १० ॥

प्रसन्नवदनं वीक्ष्य लोकानां हितकाम्यया ।
विनयेन समायुक्तो रावणः शिवमब्रवीत् ॥११॥

अर्थ—ऐसे श्री शिवजी को प्रसन्नमुख अर्थात् हर्षित देख कर संसार हित की कामना से नम्रतापूर्वक रावण उनसे बोला ॥ ११ ॥

रावण उवाच ।

नमस्ते देवदेवेश सदाशिव जगद्गुरो ।
तन्त्रविद्या क्षणं सिद्धिः कथयस्व मम प्रभो ॥ १२॥

अर्थ—हेजगद्गुरु, हे देवताओं के ईश, और सर्वदा कल्याण करने वाले ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। हे प्रभो ! क्षणमात्र

में सिद्धि प्रदान करने वाली जो तन्त्र-विद्या है उसको आप मुझसे वर्णन कीजिये ॥ १२ ॥

ईश्वर उवाच

साधु पृष्टं त्वया वत्स लोकानां हितकाम्यया ।
उड्डीशाख्यमिदं तन्त्रं कथयामि तवाग्रतः ॥ १३ ॥

अर्थ—श्री शिवजी बोले हे वत्स तुम साधु हो, संसारकी हितकी इच्छा से तुमने बहुत अच्छा प्रश्न किया है । अस्तु उड्डीश नामक तन्त्र मैं तुमसे वर्णन करता हूँ ॥ १३ ॥

पुस्तके लिखिता विद्या नैव सिद्धिप्रदा नृणाम् ।
गुरुं बिनापि शास्त्रेऽस्मिन् नाधिकारःकथञ्चन ॥ १४ ॥

अर्थ—पुस्तकमें की लिखी हुई विद्या मनुष्य को सिद्धि प्रदनहीं है । इस शास्त्र में बिना गुरुके किसीको स्वयं इसकी क्रिया करने का अधिकार नहीं है ॥ १४ ॥

अथाभिध्यास्ये शास्त्रेस्मिन् सम्यक् षट्कर्मलक्षणम्
तन्त्रमन्त्रानुसारेण प्रयोगफलसिद्धिदम् ॥ १५ ॥

अर्थ–अब इस शास्त्रमें के षट्कर्मों के अभिधान का लक्षण वर्णन करता हूँ; जिनका प्रयोग तन्त्रमन्त्रानुसार करने से प्रयोग का फल मिलता है ॥ १५ ॥

अथ षट्कर्माणि ।

शान्तिवश्यस्तम्भनानि विद्वेषोच्चाटनं तथा ।
मरणांतानि शंसंति षट्कर्माणि मनीषिणः ॥१६॥

अर्थ—शान्ति, वशीकरण, स्तम्भन, विद्वेषण, उच्चाटन और मारण इन छः प्रकार की प्रक्रियाओं को पण्डित गण षट्कर्म कहतेहैं ॥ १६ ॥

षट्कर्मणां लक्षणम् ।

रोगकृत्या गृहादीनां निराशः शान्तिरीरिता ।
वश्यं जनानां सर्वेषां विधेयत्वमुदीरितम् ॥१७॥
प्रवृत्तिरोधः सर्वेषां स्तंभनं समुदाहृतम् ।
स्निग्धानां द्वेषजानं मिथो विद्वेषणं मतम्॥१८॥
उच्चाटनं स्वदेशादे भ्रंशनं परिकीर्तितम् ।
प्राणिनां प्राणहरणं मारणं समुदाहृतम् ॥ १९ ॥

अर्थ—जिसके प्रयोग से रोग, दुष्कृति आदिकी शान्ति होती है उसको शान्ति कर्म जिससे सबलोग वशमें हो जाते हैं उसको वशीकरण, जिससे सबके प्रवृत्ति का अवरोध होता है उसको स्तंभन, जिससे परस्पर का प्रेम छूट जाता है उसको

विद्वेषण, जिससे किसीको उसके देश तथा ग्राम आदिसे पृथक् करदिया जाता है अथवा भगादियो जाता है उसको उच्चाटन और जिससे प्राणियों की मृत्यु हो जाती है उसको मारण कहा जाता है ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥

इति षट्कर्मणां लक्षणम् ।

ग्रन्थविषयवर्णनम् ।

ग्रन्थेऽस्मिन् कर्षणं चादौ द्वितीयोन्मादनं तथा।
विद्वेषणं तृतीयं च चतुर्थोच्चाटनं तथा ॥ २०॥
ग्रामस्योच्चाटनं पंच जलस्तम्भश्च षष्ठकः ।
स्तंभनं सप्तकं चैव वशीकरणमष्टकम् ॥ २१ ॥
अन्यानपि प्रयोगांश्च बहून्शृणुसुराधिप ।
अन्धी भावो मूकभावो गात्रसंकोचनं तथा ॥२२॥

अर्थ—हे असुराधिप ! इस ग्रन्थके आदिमें आकर्षण, दूसरे में उन्मादन, तीसरे में विद्वेषण, चौथेमें उच्चाटन, पाँचवेंमें ग्रामका उच्चाटन, छठवें में जलका स्तंभन, सातवें में स्तंभन और आठवें में वशीकरण तथा इसी प्रकार और भी

बहुतसा अन्धा गूँगा तथा गात्र संकोचन का प्रयोग वर्णन है इन सबको तुम सुनो ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

वधिरोलूककरणे भूतज्वरकरं तथा।
मेघानां स्तंभनं चैव दध्यादिकविनाशनम् ॥२३॥
मत्तोन्मत्तकरं चैव गजवाजिप्रकोपनम् ।
आकर्षणं भुजंगानां मानवानां तथैव च ॥२४॥
शस्यादि नाशनं चैव परग्रामप्रवेशनम् ।
वेतालादिकसिद्धिं च पादुकाञ्जनसिद्धयः ॥२५॥

अर्थ—वधिर बनादेना, उल्लू बना देना, भूत लगा देना, ज्वर चढ़ा देना, मेघका स्तंभन, दही आदिका नष्ट करना, पागल करना, हाथी घोड़ा को कुपित करना, सर्प और मनुष्यों का आकर्षण कर लेना, अन्न आदिका नाश करना, दूसरे के ग्राममें प्रवेश करना वेताल अर्थात् भूत प्रेत और पादुका तथा नेत्रके अंजन आदिकी सिद्धि ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥

कौतुकं चेन्द्रजालं च यक्षिणीमन्त्रसाधनम् ।
गुटिका खेचरत्वं च मृतसंजीवनादिकम् ॥२६॥
अन्यान् बहूंस्तथा रौद्रान् विद्यामन्त्रांस्तथा परम् ।

औषधं च तथा गुप्तं कार्यं वक्ष्यामि यत्नतः ॥२७॥
उड्डीशं यो न जानाति स रुष्टः किं करिष्यति।
मेरुं चालयते स्थानात् सागरं प्लावयेन्महीम् ॥२८॥

अर्थ—इन्द्र जालिक क्रीड़ा, यक्षिणी के साधन का मन्त्र, गुटिका, अन्तरिक्ष का विहार, मृतक को जीवित करना, तथा और भी बहुतसी भयानक विद्या और उत्तम उत्तम मन्त्र, औषधि तथा गुप्त कार्यों को विधिवत् वर्णन करूँगा। जो उड्डीश तन्त्र को नहीं जानता वह क्रोधित होकर क्या कर सकता है अर्थात् उसका किया कुछ भी नहीं हो सकता। उड्डीश तन्त्र मेरु पर्वत को उसके स्थान से हटाने तथा समुद्र में पृथ्वी को डुबा देने वाला है ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥

अकुलीनोऽधमोऽबुद्धि र्भक्तिहीनः क्षुधान्वितः।
मोहितः शंकितश्चापि निन्दकश्च विशेषतः ॥२९॥
अभक्ताय न दातव्यं तन्त्रशास्त्रमनुत्तमम्।
तथैतैः सह संयोगे कार्यं नोड्डीशकी ध्रुवम् ॥३०॥

अर्थ—जो नीच कुल में उत्पन्न हुआ हो, जिसकी बुद्धि अधम हो, जो भक्ति न करता हो, जो क्षुधा से पीड़ित हो, जो मोहित हो, जो भयभीत हो विशेष करके जो निन्दा करनेवाला

हो और जो भक्त न हो ऐसे मनुष्यों को यह उत्तम तन्त्र शास्त्र न बताना चाहिये क्योंकि इनके साथ में उड्डीश तन्त्र की विद्या की सिद्धि होने की कदापि सम्भावना नहीं है ॥२६॥३०॥

यदि रक्षेत् सिद्धिमेतामात्मानं तु तथैव च ।
देवतागुरुभक्ताय दातव्यं सज्जनाय च ॥३१॥
तपस्विबालवृद्धानाँ तथा चैवोपकारिणाम् ।
निश्चितं सुमतिं प्राप्य यथोक्तं भाषितानि च ॥३२॥

अर्थ—इसलिये यदि तन्त्र विद्या की सिद्धि और आत्मा की रक्षा चाहे तो देवता गुरु भक्त सज्जन, बालक, तपस्वी, वृद्ध सत्यवादी तथा परोपकारियों को इस विद्या को दे । ऐसा करने से आत्मा की रक्षा और तन्त्र की सिद्धि होती है ॥३१॥३२॥

न तिथिर्न च नक्षत्रं नियमो नास्ति वासरः ।
न व्रतं नियमो होमः कालवेला विवर्जितम् ॥३३
केवलं तन्त्रमात्रेण ह्यौषधी सिद्धिरूपिणी ।
यस्य साधनमात्रेण क्षणात् सिद्धिश्च जायते ३४

अर्थ—इसमें तिथि, वार नक्षत्र व्रत होम और समय आदि किसी का विचार नहीं है केवल तन्त्र से औषधियाँ सिद्धि देने

वाली हो जाती हैं, जिसका साधन कर लेने से क्षण भर में सिद्धि प्राप्त होती है ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

शशिहीना यथारात्री रविहीनं यथा दिनम्।
नृपहीनं यथा राज्यं गुरुहीनं च मन्त्रकम्॥३५॥

अर्थ—जिस प्रकार निशेश बिना निशा, दिवा कर बिना दिन, और राजा बिना राज्य सुख दायक नहीं होता उसी प्रकार गुरु बिना मन्त्र भी फल नहीं देता ॥ ३५ ॥

इन्द्रस्य च यथा वज्रं पाशश्च वरुणस्य च।
यमस्य च यथा दण्डो वह्नेशक्तिर्यथा दहेत् ३६

अर्थ—जिस प्रकार कठोर वस्तुओं को चूर्ण करने में इन्द्र का वज्र, महाबली को बाँधने में वरुण का पाश दण्ड देने में यम को दण्ड तथा भस्म करने में अग्नि की शक्ति है ॥ ३६ ॥

तथैवैते महायोगाः प्रयोज्यः क्षमकर्मणे।
सूर्यं प्रपातयेद्भूमौ नेदं मिथ्या भविष्यति ॥३७॥

अर्थ—उसी प्रकार बड़े से बड़े कामों में इन मन्त्रों को प्रयुक्त करने से शीघ्र ही कार्य हो जाते हैं। यह असत्य नहीं है। यह सूर्य को पृथ्वी पर गिरा देता है ॥ ३७ ॥

अपकारिषु दुष्टेषु पापिष्ठेषु जनेषु च।

प्रयोगैर्हन्यमानेषु दोषो नैव प्रजायते ॥३८॥
योजयेदनिमित्तं य आत्मघाती न संशयः।
असन्तुष्टः प्रयोगे यः शास्त्रमेतन्न सिद्धिदम् ॥३६॥

अर्थ—दुष्ट दुराचारी और पापी मनुष्यों पर मारण का प्रयोग करता है उसको यह शास्त्र सिद्धिदायक नहीं होता ॥ ३८ ॥ ३६ ॥

अथ मरण प्रयोग

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि प्रयोगं मारणाभिधम्।
सद्यः सिद्धिकरं नृणां शृणु रावण यत्नतः ॥४०॥

अर्थ—हे रावण अब मैं मारण प्रयोग का अभिधान वर्णन करता हूँ जो मनुष्यों को शीघ्र सिद्धि देने वाला है। तुम सावधानी से सुनो ॥ ४० ॥

मारणं न वृथा कार्यं यस्य कस्य कदाचन।
प्राणान्तसंकटे जाते कर्त्तव्यं भूतिमिच्छता ॥४१॥

अर्थ—मारण प्रयोग व्यर्थ किसी के ऊपर न करना चाहिये। इसका प्रयोग अपनी रक्षा करने के निमित्त उस समय में करना उचित है जब कि प्राण जाने की सम्भावना हो ॥ ४१ ॥

मूर्खेण तु कृते तन्त्रे स्वस्मिन्नेव समापयेत् ।
तस्मात् रक्ष्यं सदात्मानं मरणं न क्वचिच्चरेत्॥४२॥

अर्थ—मूर्ख का किया हुआ प्रयोग उसी को नष्ट कर देता है अत एव जो सर्वदा अपनी आत्मा की रक्षा करना चाहे उसको कभी मारण प्रयोग न करना चाहिये ॥ ४२ ॥

ब्रह्मात्मानं तु विततं दृष्ट्वा विज्ञानचक्षुषा ।
सर्वत्र मारणं कार्यमन्यथा दोषभाग्भवेत् ।
कर्त्तव्यं मरणं चेत्स्यात्तदा कृत्यं समाचरेत् ॥४३॥

अर्थ-जो ब्रह्मको जाननेवाला अपनी ज्ञान चक्षु से सर्वत्र ब्रह्ममय देखता रहता है यदि वह किसी आवश्यक कार्यवश मारण प्रयोग करे तो अनुचित नहीं है। इसके विपरीत जो मारण का प्रयोग करता है वह उस पाप का भागी होता है यदि मारण करना ही पड़े तो निम्नलिखित क्रिया के अनुसार मारण करना चाहिये ॥ ४३ ॥

रिपुपादतलात्पांसुं गृहीत्वा पुत्तलीं कुरु ।
चिताभस्मसमायुक्तं मध्यमारुधिरान्वितम् ॥ ४४ ॥

अर्थ—शत्रु के पैर के नीचे की मिट्टी में चिता की भस्म

और मध्यमा अंगुलीका रक्त मिला कर उसकी पुतलि बनावे ॥ ४४ ॥

कृष्णवस्त्रेण संवेष्य कृष्णसूत्रेण बन्धयेत् ।
कुशासने सुप्तमूर्तिर्दीपं प्रज्ज्वालयेत्ततः ॥ ४५ ॥

अर्थ—फिर उक्त पुतली को काले रंग के कपड़े में लपेट कर ऊपर से काला डोरा बाँध देवे पश्चात् उक्त मूर्ति को (पुतली को) कुशा के आसन पर शयन कराके दीपक जलावे ॥४५॥

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं पश्चादष्टोत्तरं शतम् ।
मन्त्रराजप्रभावेण माषांश्चाष्टोत्तरं शतम् ॥४६॥

अर्थ–फिर निम्नलिखित मन्त्र का दश * हजार जप करै पश्चात् एक सौ आठ उर्दी लेकर एक सौ आठ वार फिर मन्त्र को जपै ॥ ४६ ॥

पुत्तलीमुखमध्ये तु निक्षिपेत् सर्वमाषकान् ।
अर्धरात्रिकृते योगे शक्रतुल्योऽपि मारयेत् ॥४७॥

---

* कुछ तान्त्रिकों का मत है यह कि ग्रन्थ में जो जप की संख्या लिखी हुई है वह अन्य युगों के लिये है कलियुग में तो "कलौ चैव चतुर्गुणम्" इस प्रमाण से चौगुना जप जप के दशवें अंश से तर्पण तर्पण के दशवें भाग के बराबर ब्राह्मणों को भोजन करवाना चाहिये ।

प्रातःकाले पुत्तलिकां श्मशाने च विनिक्षिपेत् ।
मासात्मकप्रयोगेण रिपोर्मृत्यु र्भविष्यति ॥४८॥

अर्थ—फिर उस अभिमन्त्रित सब उर्दी को उस मूर्ति के मुख में डाल देवे । इस प्रयोग को आधी रात के समय में करने से इंद्र के समान शत्रु भी मारा जा सकता है । रात्रि में इस प्रयोग को करके प्रातः कालमें उक्त पुत्तली को श्मशान में गाड़ देनी चाहिये । इस प्रयोग को निरन्तर एकमासतक कर-ना चाहिये । ऐसा करने से अवश्य शत्रुकी मृत्यु होती है ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

मन्त्र

ॐ नमः कालसंहराय अमुकं हन हन क्रीं हुं फट् भस्मी कुरु कुरु स्वाहा ॥

विधिः—इस मन्त्रका प्रयोग करते समय इसमें जहाँ "अमुकं" शब्द है वहाँ शत्रु का नाम लेना चाहिये

निम्बकाष्ठं समादाय चतुरंगुलमानतः ।
शत्रुकेशान् समालिप्य ततोनाम समालिखेत्॥४९॥
चितांगारे च तन्नाम्ना धूपं दद्यात् समाहितः ।

त्रिरात्रं सप्तरात्रं वा यस्य नाम उदाहृतम् ॥५०॥
कृष्णाष्टम्यां चतुर्दश्यां चाष्टोत्तरशतं जपेत् ।
प्रेतो गृह्णातितच्छीघ्रं मन्त्रेणानेन मन्त्रवित्॥५१॥

अर्थ—चार अंगुलकी नीम की लकड़ी लेकर उसमें शत्रुके शिरका बाल लपेटे और उसीसे शत्रुका नाम लिखे । फिर उस नामको सावधानी से चिताके अंगारेका धूपदेवे । इस प्रकार तीन रात अथवा सात रात तक जिसके नाम पर इस प्रयोग को करै उसको इस मन्त्रके प्रभावसे शीघ्र प्रेत पकड़ लेता है । प्रयोग करने वाले को इस प्रयोगको कृष्ण पक्षकी अष्टमीसे आरंभ करके चतुर्दशी तक समाप्त करना चाहिये और प्रति दिन निम्नि लिखित मन्त्रका एक सौ आठ वार जप भी करते रहना चाहिये ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥

मन्त्र ।

ॐ नमो भगवते भताधिपतये विरूपाक्षाय घोरदंष्ट्रिणे विकरालिने ग्रहयक्षभतेनानेन शंकर अमुकं हन हन दह दह पच पच गृह्ण गृह्ण हुं फट् ठः ठः

विधिः—उपरोक्त प्रयोग में इसी मन्त्र का एक सौ अठा

थार जप करना चाहिये । प्रयोग करते समय उसमें जहां "अमुकं" शब्द है वहां जिसके ऊपर प्रयोग करे उसका नाम लेना चाहिये ।

नरास्थि कीलकं पुष्ये गृह्णीयाच्चतुरंगुलम् ॥
निखनेच्च गृहे यावत्तावत्तस्य कुलक्षयः ॥५२॥

मन्त्रः ।

ॐ ह्रीं फट् स्वाहा ॥ अयुतजपात् सिद्धिः ।

सर्पास्थ्यंगुलमात्रं चाश्लेषायां रिपोर्गृहे ॥
निखनेच्च तथा जप्तं मारयेत् रिपुसन्ततिम् ॥५३॥

अर्थ—तथा इसी प्रकार अश्लेषा नक्षत्र में एक अंगुल की सर्प की हड्डी शत्रुके गृहमें खोद कर गाड़ दे और निम्न लिखित मन्त्रका जप करता रहे तो शत्रुकी सन्तत्ति नाश हो जाता है ॥ ५३ ॥

मन्त्रः ।

॥ ॐ सुरेश्वराय स्वाहा ॥

अश्वस्थिकीलमश्विन्यां निखनेच्चतुरंगुलम् ।
शत्रोर्गृहे निहन्त्याशु कुटुम्बं वैरिणां कुलम् ॥५४॥

अर्थ—अश्विनी नक्षत्र में घोड़ा के हड्डी की चार अंगुल की कील निम्न लिखित मन्त्र से अभिमन्त्रित करके शत्रुके गृहमें गाड़ देने से शत्रुके कुटुम्ब का नाश हो जाता है ॥ ५५ ॥

मन्त्रः ।

॥ हुं हुं फट् स्वाहा ॥ सप्तदशाभिमन्त्रितं कृत्वा निखनेत् ।

विधिः—ऊपरोक्त कीलको इस मन्त्र से सत्रह बार अभिमन्त्रित करके शत्रुके गृहमें गोड़ देना चाहिये ।

आर्द्रायां निम्बवन्दाकं शत्रोः शायनमन्दिरे ।
निखनेन्मृतवच्छत्रू रुद्धते च पुनः सुखी ॥५५॥

अर्थ—जिस गृहमें शत्रु शयन करता हो उसमें आर्द्रा नक्षत्र में निम्ब का वन्दाक खोद कर गाड़ देने से शत्रु मरणोन्मुख हो जाता है । और फिर जब उक्त वन्दाक को निकाल ले वह फिर पूर्ववत सुखी हो जाता है ॥ ५६ ॥

तथा शिरीषवन्दाकं पूर्वोक्तेनोडुना हरेत् ।
शत्रोर्गेहे स्थापयित्वा रिपोर्नाशो भविष्यति ५७

अर्थ—और उपरोक्त विधिके अनुसार सीरीसका वन्दाक शत्रु के गृहमें गोड़देने से उसका नाश होता है ॥ ५८ ॥

मन्त्रः ।

॥ हुं हुं फट् स्वाहा ॥ एकविंशतिवार मभिमन्त्रितं कृत्वा निखनेत् ।

विधिः—उपरोक्त दोनों प्रयोगों में कीलको इस मन्त्र से इक्कीस बार अभिमन्त्रित करके शत्रुके घरमें गाड़ना चाहिये ।

मन्त्रः

॥ ॐ डं डां डिं डीं डुं डूं डें डं डों डौं डं डः । अमुकं गृह्ण गृह्ण हुं हुं ठः ठः ॥

विधिः—इस मन्त्र से मनुष्य की हड्डी की कील एक हजार बार अभि मन्त्रित करके जिसके नाम से चीता में गाड़ देवे वह ज्वरसे पीड़ित होकर मर जाता है । इसी प्रकार पहिले कहे हुए मन्त्रसे मनुष्य के हड्डी की कील को एक हजार बार अभि मन्त्रित करके जिसके घर में अथवा जिसके नामसे आधी रात के समय स्मशान में गाड़दे उसका नाश हो जाता है ।

रिपुविष्ठां वृश्चिकं च खनित्वा तु विनिःक्षिपेत् ।
आच्छाद्यावरणेनाथ तत पृष्ठे मृत्तिकां क्षिपेत् ।
म्रियते मलरोधेन उद्धृते च पुनः सुखी ॥५७॥

अर्थ—शत्रुकी विष्ठा और बिच्छू को एक पात्रमें रख कर बन्द करदे फिर उस पात्रके पीछे मिट्टी लगाके और जमीन खोद कर उसे गाड़दे तो शत्रु मल के अवरोध से अर्थात् मल के रुक जानेसे मरने लग जाता है। और जब उसको जमीन में से निकाल ले तब उसका कष्ट भी छुट जाता है और वह पूर्ववत् सुखी हो जाता है ॥ ५७ ॥

शत्रुपादतलात्पांसुं गृह्णीयाद्भौमवासरे ।
गोमूत्रेण तु सिंचित्वा प्रतिमा कारयेत् सुधीः ५८ ।
निर्जने च नदीतीरे स्थापयेत् स्थंडिलोपरि ।
लोहशूलं च निखनेत्तद्वक्षसि सुदारुणम् ।
तद्वामे भैरवं कृष्णं बलिभिः प्रत्यहं यजेत् ॥५६॥

अर्थ—मंगलवार के दिन शत्रु के पैर के नीचे की मिट्टी लाकर गौके मूत्र में उसको भिगावे अर्थात् सान ले फिर शत्रु के नाम से उस मिट्टी की एक पुतली बना लेवे। फिर एकान्त स्थान में अथवा नदी के तट पर वेदी बना कर उस मूर्ति को उस पर स्थापित करके उसकी छाती में खूब तेज लोहे का त्रिशूल गाड़ देवे। पश्चात् उस मूर्ति के बाम भाग में काल भैरव की मूर्ति स्थापित करके प्रति दिन उनकी पूजा और बलिदान दिया करे ॥ ५८ ॥ ५६ ॥

एकादशबटुं तत्र परमान्नेन भोजयेत् ।
अखण्डदीपं तस्याग्रे कटुतैलेन ज्वालयेत् ॥६०॥
व्याघ्रचर्मासनं कृत्वा निषसेत्तस्य दक्षिणे ।
दक्षिणाभिमुखो रात्रौ जपेन्मन्त्रमतन्द्रितः ॥६१॥

अर्थ—जिस स्थान में इस प्रयोग को करे उस स्थान में ग्यारह ब्रह्मचारियों को उत्तम उत्तम अन्न का भोजन करावे और उस भैरव मूर्ति के सम्मुख रात दिन कड़ुए तैल का अखण्ड दीपक जलाया करै । और उस मूर्ति की दाहिनी ओर बाघ के चर्म का आसन बना कर दक्षिण मुख होकर उस पर बैठे और जितेन्द्रिय हो निम्नलिखित मन्त्र का जप करै ॥६०॥६१॥

मन्त्रः ।

ॐ नमोभगवते महाकालभैरवाय कालाग्नि-तेजसे अमुकं मे शत्रुं मारय मारय पोथय पोथय हुं फट् स्वाहा ॥

अयुतं प्रजपेदेनं मन्त्रं निशि समाहृतः ।
एकोनत्रिंशद्दिवसैर्मारणं जायते ध्रुवम् ॥ ६२ ॥

विधि—रात्रि के समय सावधानी से इस मन्त्र का दश

हजार जप करने से उनतिस दिन में यह प्रयोग अवश्य सफल होता है। इस मन्त्र में जहाँ "अमुक" शब्द है वहाँ जिसके ऊपर प्रयोग करना हो जप करते समय उसका नाम लेना चाहिये ॥ ६२ ॥

अथ आर्द्रपटी साधन ।

मन्त्रः ।

ॐ नमो भगवति आर्द्रपटेश्वरी हरितनील-पट कालि आर्द्रजिह्वे चाण्डालिनि रुद्राणि कपालिनि ज्वालामुखि सप्तजिह्वे सहस्रनयने एहि एहि अमुकं ते पशुं ददामि अमुकस्य जीवं निकृन्तय एहि जीवितापहारिणि हुं फट् भुर्भुवः वः फट् रुधिरार्द्रवशाखा दिनं दिनं मम शत्रून् छेदय छेदय शोणितं पिव पिव हुं फट् स्वाहा ॥

विनियोगः ।

ॐ अस्यश्रीआर्द्रपटीमहाविद्यामन्त्रस्य दुर्वासा

ऋषिर्गायत्री छन्दः हुं बीजं स्वाहा शक्तिः ममा-
मुकशत्रुनिग्रहार्थे जपे विनियोगः ॥

अर्थ—ऊपर आद्रंपटी भगवती का मन्त्र है उसका जप करना चाहिये और नीचे विनियोग है इसको हाथ में जल लेकर पढ़े और फिर उस जलको पृथ्वी पर डाल दे। उपरोक्त मन्त्र और विनियोग में जहां "अमुक" शब्द है वहाँ शत्रु का नाम लेना चाहिये।

केवलं जपमात्रेण मासान्ते शत्रुमारणम् ।
कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत् कृष्णचतुर्दशीम् ॥ १ ॥
शत्रुनामसमायुक्तं मन्त्रं तावज्जपेन्नरः ।
रिपुपादस्थधूल्याश्च कुर्यात् पुत्तलिकां ततः ॥२॥
अजापुत्रबलिं दत्त्वा वस्त्रं रक्तेन संलिपेत् ।
ततो गृहीत्वा तद्वस्त्रं न्यसेत् पुत्तलिकोपरि ॥३॥
यावच्छुष्यति तद्वस्त्रं तावच्छत्रु विनश्यति ।
मन्त्रराजप्रभावेण नात्र कार्या विचारणा ॥ ४ ॥

विधि—उपरोक्त मन्त्र का केवल जप करने से एक महीने में शत्रु मारण का प्रयोग सिद्ध होता है। इस मन्त्र का प्रति

दिन एक सौ आठ बार जप करना चाहिये। फिर कृष्णपक्षकी अष्टमी से कृष्णपक्ष की चतुर्दशी तक शत्रु के नाम के सहित मन्त्र का जप करे और जब अन्तिम दिन आवे अर्थात् सातवें दिन शत्रु के पैर के नीचे की मिट्टी लाकर उसकी पुतली बनावे और काली को बकरा का बलिदान करके उसके रक्त में एक वस्त्र को भिगा कर उस वस्त्र को उस पुतली के ऊपर रख दे और मन्त्र का जप करता रहे। इस प्रकार से मारण का प्रयोग करे तो मन्त्र राज के प्रभाव से जब तक वह वस्त्र सूखेगा तब तक शत्रु की मृत्यु हो जायगी ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

अथ वैमारणकवचम् ।

विनियोगः ।

॥ ॐ अस्य श्रीकालिकाकवचस्य भैरवऋषि गायत्री छन्दः श्रीकालीदेवता सद्यः शत्रु संहननार्थे विनियोगः ॥

विधिः—हाथ में जल लेकर इस विनियोग को पढ़े और फिर उस जल को पृथ्वी पर डाल दे और निम्नलिखित काली जी का ध्यान करे ॥ १ ॥

अथ ध्यानम् ।

ध्यात्वा कालीं महामायां त्रिनेत्रां बहुरूपिणीं ।

चतुर्भुजां लोलजिह्वां पूर्णचन्द्रनिभाननाम् ॥२॥
नीलोत्पलदलश्यामां शत्रुसङ्घविदारिणीम् ।
नरमुण्डं तथा खड्गं कमलं वरदं तथा ॥ ३ ॥
बिभ्राणां रक्तवसनां घोरदंष्ट्रस्वरूपिणीम् ।
अट्टाट्टहासनिरतां सर्वदा च दिगम्बराम् ॥४॥
शवासनस्थितां देवीं मुण्डमालाविभूषिताम् ।
इति ध्यात्वा महादेवीं ततस्तु कवचं पठेत् ॥५॥

अर्थ—महामाया काली जी का ध्यान इस प्रकार से करे कि, तीन नेत्र, महा भयानक स्वरूप, चार भुजा, लम्बी जिह्वा, पूर्ण चन्द्रमा के सदृश मुख, नील कमल के समान श्याम वर्ण की शरीर शत्रु के झुण्ड को नाश करनेवाली एक हाथ में मनुष्य का कपाल दूसरे में खड्ग तीसरे में कमल और चौथे में खप्पर लिये, बड़े बड़े दांत, रक्त वस्त्र ओढ़े और अत्यन्त भयदायक स्वरूप बनाये, बड़े जोर से हंसनेवाली और सर्वदा दिगम्बर धारण करनेवाली अर्थात् नंगी रहनेवाली, कण्ठ में मनुष्य के मुण्ड की माला पहिने हुए और मुर्दे के ऊपर आसन लगाये हुए देवी बैठी है। इस प्रकार महाकाली का ध्यान कराने के पश्चात् निम्नलिखित कवच को पढ़ना चाहिये।२।३।४।५।

अथ कवचम् ।

ॐ कालिका घोररूपाढ्या सर्वकामप्रदा शुभा ।
सर्वदेवस्तुता देवी शत्रुनाशं करोतु मे ॥ १ ॥
ह्रं ह्रं स्वरूपिणी चैव ह्रं ह्रं ह्रं संगिनी तथा ।
ह्रं ह्रं ज्ञौं ज्ञौं स्वरूपा सा सर्वदा शत्रुनाशिनी ॥२॥
श्रीं ह्रं ऐं रूपिणी देवी भवबन्धविमोचनी ।
यथा शुम्भो हतो दैत्यो निशुंभश्च महासुरः ॥३॥
वैरिनाशाय वन्दे तां कालिकां शंकरप्रियाम् ।
ब्राह्मी शैवी वैष्णवी च वाराही नरसिंहिका ॥४॥
कौमारी श्रीश्च चामुण्डा खादयन्तु ममद्विषान् ।
सुरेश्वरी घोररूपा चण्डमुण्डविनाशिनी ॥ ५ ॥
मुण्डमाला वृतांगी च सर्वतः पातु मां सदा ।
ह्रं ह्रं कालिके घोरदंष्ट्रे रुधिरप्रिये ॥ ६ ॥

मन्त्रः ।

रुधिरपूर्णवक्त्रे च रुधिरावितीस्तीन मम शत्रून्

खादय खादय हिंसय हिंसय मारय मारय भिन्धि भन्धि छिन्धि छिन्धि उच्चाटय उच्चाटय द्रावय द्रावय शोषय शोषय यातुधानीं चामुण्डे ह्रं ह्रं वां वीं कालिकायै सर्वशत्रून् समर्पयामि स्वाहा ॥ ॐ जहे किटि किटि किरि किरि कटु कटु मर्दय मर्दय मोहय हर हर मम रिपून् ध्वंसय ध्वंसय भक्षय भक्षय त्रोटय त्रोटय यातुधानिका चामुण्डा सर्वजनान् राजपुरुषान् राजश्रियं देहि देहि नूतननूतनधान्यं जक्षय जक्षय क्षां क्षां क्षूं क्षें क्षौं क्षः स्वाहा ॥

इति कवचम्।

अथ कवच माहात्म्यम्।

—:❀❀:—

इत्येत् कवचं दिव्यं कथितं तव रावण ।

ये पठन्ति सदा भक्त्या तेषां नश्यन्ति शत्रवः १
वैरिणः प्रलयं यान्ति व्याधिताश्च भवन्ति हि ।
धनहीनाः पुत्रहीनाः शत्रवस्तस्य सर्वदा ॥ २ ॥
सहस्रपठनात् सिद्धिः कवचस्य भवेत्तदा ।
ततः कार्य्याणि सिद्ध्यन्ति नान्यथा मम भाषितम् ३

अर्थ—इतना वर्णन करके श्री शिवजी बोले हे रावण! इस दिव्य कवच का मैंने तुमसे वर्णन किया। जो भक्ति पूर्वक सर्वदा इस कवच का पाठ करते हैं उनके शत्रुओं का नाश हो जाता है। इस कवच के पाठ करने वाले के शत्रु रोगसे पीड़ित हो कर नाश हो जाते हैं, इसके पाठ करने वाले शत्रु धन तथा पुत्र को कभी नहीं पाते। इस कवच का एक हजार पाठ करने से सिद्धि प्राप्त होती है। पश्चात् प्रयोग करने से निःसन्देह कार्य सिद्ध होता है ॥ १ ॥ २ ३ ॥

इति कवचमाहात्म्यम् ।

स्मशानांगारमादाय चूर्णं कृत्वा विधानतः ।
पादोदकेन पिष्ट्वा च लिखेल्लोहशलाकया ॥४॥

भूमौ शत्रून् हीनरूपान् उत्तराशिरसस्तथा ।
हस्तं दत्त्वा तत् हृदये कवचं तु स्वयं पठेत् ॥५॥
प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा वै तथा मन्त्रेण मन्त्रवित् ।
हन्यात् अस्त्रप्रहारेण तन्मूर्तेः कण्ठमन्वयम् ॥६॥
ज्वलदङ्गारलेपेन भवति ज्वरितो भृशम् ।
पोञ्छणेर्वामपादेन दरिद्रो भवति ध्रुवम् ॥ ७ ॥

अर्थ—स्मशान का कोयला लाकर विधि पूर्वक उसका चरण बना लेवे फिर उस को शत्रुके पैर के जलमें मिला कर पीले, पश्चात् पृथिवी में अपने शत्रुकी कुरूप मूर्ति उक्त मसि से लोहेकी कलम से लिखे । लिखिते समय मूर्तिका शिर उत्तर और पैर दक्षिण ओर करदे । फिर उसके हृदय पर अपना हाथ रख कर पहिले वर्णन किया हुआ कवच पढ़े और मन्त्र जानने वाला उक्त मूर्तिकी प्राणप्रतिष्ठा करदे । फिर शस्त्र लेकर शत्रु की मूर्तिका शिर काट डाले । फिर उस कटी हुई मूर्ति में जलते हुए अङ्गारे का लेप करने से शत्रु ज्वर, से पीड़ित हो कर मर जाता है । और उसका बायां पैर पोछने से शत्रु अवश्य दरिद्र हो जाता है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥

वैरिनाशकरं प्रोक्तं कवचं वश्यकारकम् ।

परमैश्वर्यदं चैव पुत्रपौत्रादिवृद्धिदम् ॥८॥
प्रभातसमये चैव पूजाकाले प्रयत्नतः ।
सायंकाले तथा पाठात् सर्वसिद्धिर्भवेत् ध्रुवम्॥९॥
शत्रुरुच्चाटनं याति देशात् वै विच्युतो भवेत् ।
पश्चात् किं करतामेति सत्यमेव न संशयः॥१०॥

॥ इति श्री उड्डीशतन्त्रे रावणेश्वरसम्वादे-
मारणप्रयोगवर्णनं नाम प्रथमः
पटलः समाप्तः ॥ १ ॥
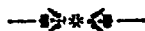
अर्थ—यह वैरी नाशक कवच सबको वश करने वाला, पुत्र, पौत्रको बढ़ाने वाला तथा महान ऐश्वर्य को देने वाला है। प्रातः काल में पूजा के समय और सायं काल में यत्न पूर्वक इस का पाठ किया करे तो अवश्य सब सिद्धियां प्राप्त हो जाती हैं। इस कवचका पाठ करने से शत्रुको उच्चाटन हो जाता है और वह देश त्याग कर विदेश में भाग जाता है अथवा अन्त में विवश हो कर ,वह स्वयं दास बन जाता है इस में कुछ भी सन्देह नहीं है ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

इति श्री उड्डीशतन्त्रे रावणेश्वरसम्वादे भाषाटीका सहित
मारण प्रयोग वर्णनं नाम प्रथमः पटलः समाप्तः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयः पटलः ।
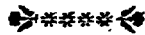
अथ माला निर्णयः ।

प्रवालवज्रमणिभिर्वश्यपौष्टिकयोर्जपेत् ।
मत्तेभदन्तमणिभिर्जपेदाकृष्टकर्मणि ॥ १ ॥
साध्यकेशसूत्रयुक्तिस्तुरङ्गदशनोद्भवैः ।
उत्तमालां परिष्कृत्य विद्वेषोच्चाटने जपेत् ॥२॥
मृतस्य युद्धशून्यस्य दशनैर्गर्दभस्य च ।
कृत्वाक्षमालां जप्तव्यं शत्रोर्मारणमिच्छता ॥३॥
क्रियते शंखमणिभिर्धर्म कामार्थ सिद्धये ।
पद्माक्षैः प्रजपेन्मन्त्र सर्वकामार्थ सिद्धये ॥४॥
रुद्राक्षमालया जप्तो मन्त्रः सर्व फलप्रद् ।
स्फटिकी मौक्तिकी वापि रौद्राक्षी वा प्रवालजा ॥
सारस्वती प्राप्तये शस्ता पुत्रजीवैस्तथा जपेत् ५

अर्थ—पुष्टि और वशीकरण में मूँगा, हीरा तथा मणि की माला से, आकर्षण में मतवाले हाथी के दांत की माला से, विद्वेषण तथा उच्चाटन में सूत अथवा मनुष्य के बाल में पिरोकर घोड़े के दांत की माला से मारण में जिस मनुष्य का मृत्यु युद्ध में न हुई हो उसके उसके दांत को अथवा गदहे के दांत की माला से, और सब कामना की सिद्धि में शंख और मणि की माला से, और सब कामना की सिद्धि के लिये कमला गट्टा की माला से जप करना चाहिये। रुद्राक्ष की माला से जप किया हुआ मन्त्र सब प्रकार का फल देता है, स्फटिक मणि, मोती, रुद्राक्ष अथवा पुत्रजीवा की माला से जप करने से सरस्वती अर्थात् विद्या की प्राप्ति होती है ॥१॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥५॥

पद्मसूत्रकृता रज्जुःशस्ता शान्तिकपौष्टिके ।
आकृष्टयुच्चाटयोर्वाजिपुच्छवालसमुद्भवा ६
नरस्नायुविशेषैस्तु मारणे रज्जुरुत्तमा ।
अन्यासां चाक्षमालानां रज्जुः कार्पासिकीमता ७
सप्तविंशति संख्याकैः कृता सिद्धिं प्रयच्छति !
अक्षैस्तु पंचदशभिरभिचारफलप्रदा ८
अक्षमाला विनिर्दिष्टा मन्त्रादौ तत्त्वदर्शिभिः ।

अष्टोत्तरशतेनैव सर्वकर्मेषु पूजिता ॥ ९ ॥

अर्थ—शान्ति और पुष्टि कर्म में कमल के सूत्र की रस्सी में आकर्षण और उच्चाटन में मनुष्य के नसमें, और दूसरे नामों में कपास के सूत्र में माला गूंथनी चाहिये। सत्ताइस दाने की माला सिद्धि देने वाली होती है, अभिचार में पन्द्रह दाने की माला फलदायक होती है, और एक सौ आठदाने की माला सब कर्मों में पूजित है। ऐसा तत्त्व जानने वाले तान्त्रिकों का मत है ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

अथ दिशानिर्णयः ।

जपेत् पूर्वमुखं वश्ये दक्षिणं चाभिचारके ।
पश्चिमं धनदं विद्यादुत्तरं शान्तिकं भवेत् ॥
आयुष्यरक्षां शान्तिं च पुष्टिं वापि करिष्यति१०

अर्थ—वशीकरण में पूर्वमुख मारण आदि में दक्षिणमुख, विद्या धन शान्ति, पुष्टि तथा आयुकी रक्षा में उत्तर मुख बैठ कर जप करना चाहिये ॥ १० ॥

अथ जपलक्षणम् ।

यं श्रूयतेऽन्यः स तु वाचिकः स्यात्,
उपांशुसंज्ञो निजदेहवेद्यः ।

निष्कम्पदन्तौष्ठमथाक्षराणां,
यच्चिंतितं स्यादिह मानसाख्यः ॥ ११ ॥
परामिचारे किल वाचिकः स्यात्,
उपांशुरुक्तोऽप्यथ शान्तिपुष्ट्योः ।
मोक्षेषु जापः किल मानसाख्य
स्त्रिधा जपः पापनुदे तथोक्तः ॥ १२ ॥

अर्थ—जप तीन प्रकार के होते हैं, वाचिक उपांशु और मानसिक जप करते हुए जो दूसरे को सुनाई दे उसको वाचिक, जो अपने को सुन पड़े पर दूसरा न सुन सके उसको उपांशु और जिसमें केवल ओष्ठ और जिह्वा हिलती हुई दिखाई देती और जप मन में किया जाता है उसको मानसिक कहते हैं। मारण आदि में वाचिक, शान्ति और पुष्टि में उपांशु तथा मोक्ष में मानसिक जप करना उत्तम है। यह तीनों प्रकार का जप पापों को नाश करने वाला कहा जाता है ॥ ११ ॥ १२ ॥

अथ अश्वमारणम् ।

कृष्णाजीरकचूर्णेन अंजिताश्वो न पश्यति ।
तक्रेण क्षालयेच्चक्षुः सुस्थो भवति घोटकः ॥ १३ ॥

अर्थ—घोड़े की आँख में काले जीरे को चूर्ण करके उसका अंजन लगाने से घोड़ा अन्धा हो जाता है और मट्ठे से धो देने से फिर उसे दिखाई देनें लगता है ॥ १३ ॥

घ्राणे छुछुन्दरीचूर्णे दत्ते पतति घोटकः ।
स्वस्थश्चन्दनपानेन नासया तु न संशयः॥१४॥

अर्थ—छछुन्दर का चूर्ण घोड़े के नाकमें डालदे तो वह मूर्छित होकर गिर पड़ता है और फिर पानी में चन्दन मिला कर उसको नासिका में डाल दे तो वह स्वस्थ हो जाता है ॥ १४ ॥

अश्वास्थिकीलमश्विन्यां कुर्यात् सप्तांगुलं पुनः ।
निखनेदश्वशालायां मारयत्येव घोटकान् ॥१५॥

मन्त्रः ।

ओं पच पच स्वाहा ॥ अयुतजपात् सिद्धिः ।

अर्थ—अश्विनी नक्षत्र में घोड़ेकी हड्डी की सात अंगुल की कील बना कर और उपरोक्त मन्त्र से अभिमन्त्रित करके अश्व शाला में गाड़ देने से घोड़े मर जाते हैं । यह मन्त्र दशहजार जपकरनेसे सिद्ध होता है ॥ १५ ॥

अथ धीवरमत्स्यनाशनम् ।

संग्राह्यं पूर्वफाल्गुन्यां बदरीकाष्ठकीलकम् ।
दासगृहेऽष्टांगुलं च निखने न्मत्स्यनाशकम् १६

मन्त्रः ।

॥ ओं जले पच पच स्वाहा ॥ इत्यनेन मन्त्रेणायुतजपात् सिद्धिः !

अर्थ—पूर्वफाल्गुनी नक्षत्र में वैरके काठकी आठ अंगुल की कील बना कर उसको उपरोक्त मन्त्र से अभिमन्त्रित करके धीवर के घरमें गाड़ दे तो उसकी मछलियां नष्ट हो जाती हैं। यह मन्त्र दश हजार जप करने से सिद्ध होता है ॥ १६ ॥

अथ रजकवस्त्रनाशनम् ।

गृहीत्वा पूर्वफाल्गुन्यां जातीकाष्ठस्य कीलकम् ।
अष्टांगुलप्रमाणं तु निखनेत् रजकालये
शताभिमन्त्रितं कृत्वा तस्य वस्त्राणि नाशयेत् १७

मन्त्रः ॥ अं कुंभं स्वाहा ।

अर्थ—पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में चमेली की लकड़ी को आठ अंगुल की कील बना कर और इस मन्त्र से उसको एक सौ

बार अभिमन्त्रित करके धोबीके घरमें उक्त कीलको गाड़ दे तो उसका वस्त्रनाश हो जाता है ॥ १७ ॥

अथ तैलनाशनम् ।

मधुकाष्ठस्य कीलं तु चित्रायां चतुरंगुलम् ।
निखनेत्तैलशालायां तैलं तत्र विनश्यति ॥१८॥

मन्त्रः ॥ ॐ दह दह स्वाहा ॥ इत्यनेन मन्त्रेण सहस्रसंख्याकजपः ।

अर्थ—चित्रा नक्षत्रसे मधुकाष्ठ की चार अंगुल की कील बना कर इस मन्त्रसे एक हजार बार उसको अभिमन्त्रित करै फिर जहाँ तेल पेरा जाता हो वहाँ गाड़दे तो वहां का सब तेल नष्ट हो जाय ॥ १८ ॥

अथ शाकनाशनम् ।

गन्धकं चूर्णितं तत्र निक्षिपेज्जलमिश्रितम् ।
नश्यन्ति सर्वशाकानि शोषाण्यल्पबलानि च१६

अर्थ—जलमे गन्धक का चूर्ण मिला कर शाक पर छिड़क देने से विना परिश्रम सब शाक सूखकर नष्ट हो जाता है ॥१६॥

अथ दुग्धनाशनम् ।

निक्षिपेदनुराधायां जम्बुकाष्ठस्य कीलकम् ।

अष्टांगुलं गोपगेहे गोदुग्धं परिनश्यति ॥२०॥

अर्थ—अनुराधा नक्षत्र मे जामुन की लकड़ी की आठ अंगुल की कील अहीर के घरमे दे तो गौ का दूध नष्ट हो जाय ॥ २० ॥

अथ मद्यनाशनम् ।

षोडशांगुलकं कीलं कृत्तिकायां सितार्जकम् ।
शौण्डिकस्य गृहे क्षिप्तं मदिरां नाशयत्यलम् ॥२१॥

अर्थ—कृत्तिका नक्षत्र में सफेद मन्दार की लकड़ी की सोरह अंगुल की कील कलवार के घरमें गाड़दे तो मदिरा नष्ट हो जाय ॥ २१ ॥

अथ ताम्बूलनाशनम् ।

नवांगुलं पूङ्गकाष्ठकीलकं निक्षिपेत् गृहे ।
ताम्बूलिकस्य क्षेत्रे वा ऋक्षे शतभिषाह्वये ।
तदा तस्य च ताम्बूलं नाशयत्याशु निश्चितम् ॥२२॥

अर्थ—शतभिषा नक्षत्र में सुपारी के लकड़ी की कील बनाकर तम्बोली के घरमें अथवा उसके खेत में गाड़दे तो उस का पात अवश्य नष्ट हो जाय ॥ २२ ॥

अथ सस्यनाशनम् ।

सस्यस्य नाशनं चाथ कथयामि समासतः ।
येनैव कृतमात्रेण सस्यनाशो भविष्यति ॥२३॥
इन्द्रवज्रं पतेत् यत्र गृहीत्वा मृत्तिकां ततः ।
तन्मृत्तिकां समादाय वज्रं कृत्वा विचक्षणः ॥२४॥
क्षेत्रे यस्मिन् रोपयेत्तत् सत्यं सर्वं विनश्यति ।
इमं मन्त्रं समुच्चार्य मन्त्रेणानेन मंत्रयेत् ॥२५॥

मन्त्रः ।

ॐ नमो वज्रपाताय सुरपतिराज्ञापयति हुं फट् स्वाहा।

इति श्री उड्डीशतन्त्रे रावणेश्वरसम्वादे अश्वादि
मारणं तथा सस्यादिनाशनवर्णनं नाम
द्वितीयः पटलः समाप्तः ॥ २ ॥

—❋❋❋❋❋—

अर्थ—श्री शिवजी बोले कि, अब संक्षेप में अन्नका नाश करना वर्णन करता हूं । जहां इन्द्रका वज्र अर्थात् बिजली गिरे उस जगह की मिट्टी लाकर उसका वज्र बना वै और इस मन्त्र से उसको अभिमन्त्रित करके जिस खेत में गाड़दे उस खेतमें

का सब अन्न अवश्य नष्ट हो जाय ॥ २३ । २४ । २५ ॥

इति श्री उड्डीशतन्त्रे रावणेश्वरसम्वादे भाषाटीकासहिते
अश्वादिमारणं तथा सस्यादिनाशवर्णनं नाम
द्वितीयः पटलः समाप्तः ॥ २ ॥

—o:□:o—

अथ तृतीयः पटलः ।

—❋□❋—

मोहनाभिधानम् ।

ईश्वर उवाच ॥

अथाग्रे कथयिष्यामि प्रयोगं मोहनाभिधम् ।
सद्यः सिद्धिकरं नृणां शृणु रावण यत्नतः ॥ १ ॥

अर्थ—श्री शिवजी बोले कि, हे रावण ! अब आगे मैं मोहन प्रयोग वर्णन करता हूँ जो मनुष्यों को शीघ्र सिद्ध देने वाला है तुम सावधान होकर इसको सुनो ॥ १ ॥

सिन्दूरं कुंकुमं चैव गोरोचनसमन्वितम् ।
धात्रीरसेन सम्पिष्टं तिलकं लोकमोहनम् ॥२॥

अर्थ—आँवले के रसमे सिन्दूर, कुंकुम [केसर] और

गोरोचन पीस कर तिलक करने से सबलोग मोहित हो जाते हैं ॥ २॥

सहदेव्या रसेनैव तुलसीवीजचूर्णकम् ।
रवौ यः तिलकं कुर्यात् मोहयेत् सकलं गजत्॥३॥

अर्थ—रविवार के दिन सहदेईये कि रसमे तुलसी का बीज पीस कर तिकल करने से सब लोग मोहित हो जाते हैं ॥ ३ ॥

मनःशिलां च कर्पूरं पेषयेत् कदलीरसे ।
तिलकं मोहनं नृणां नान्यथा मम भाषितम् ॥४॥

अर्थ—केलेके रसमे मनशील और कपूर मिला कर तिलक करने से सबलोग अवश्य मोहित हो जाते हैं ॥ ४ ॥

हरितालं चाश्वगन्धां पेषयेत् कदलीरसे ।
गोरोचनेन संयुक्तं तिलकं लोकमोहनम् ॥५॥

अर्थ—केलेके रसमें हरताल, असगन्ध और गोरोचन मिला कर तिलक करने से सब लोग मोहित हो जाते हैं ॥ ५ ॥

शृङ्गीचन्दनसंयुक्तं वचाकुष्ठसमन्वितम् ।
धूपं देहे तथा वस्त्रे मुखे दद्यात् विशेषतः ॥६॥
पशुपक्षिप्रजानां च राज्ञां मोहनकारकम् ।

ताम्बूलं मूलतिलकं लोकमोहनकारकम् ॥ ७ ॥

अर्थ—ककरासिंगी, चन्दन, वच और कूट को एकत्रित करके वस्त्र शरीर तथा विशेष कर मुख पर उसका धूप देने से पशु पत्ती, राजा प्रजा सब मोहित हो जाते हैं। इसी प्रकार पान की जड़ का तिल भी सबको मोहित करता है ॥ ६ ॥ ७ ॥

सिन्दूरं च श्वेतवचा ताम्बूलरसपेषिता ।
अनेनैव तु मन्त्रेण तिलकं लोकमोहनम् ॥८॥

अर्थ—पान के रस में सिन्दूर और सफेद वच मिला कर तथा निम्नलिखित मन्त्र से अभिमन्त्रित करके तिलक करने से सब लोग मोहित होते हैं ॥ ८ ॥

अपामार्गो भृङ्गराजो लाजा च सहदेविका ।
एभिस्तु तिलकं कृत्वा त्रैलोक्यं मोहयेन्नरः॥९॥

अर्थ—चिचिढ़ी, भांगरा, लज्जावन्ती और सहदेइया इनको एकत्र करके इस तिलक को भी करके मनुष्य तीनों लोक को मोहित कर लेता है ॥ ९ ॥

श्वेतदुर्वां गृहीत्वा तु हरितालं च पेषयेत् ।
कृतं तु तिलकं भाले दर्शनान्मोहकारकम् ॥१०॥

अर्थ—सफेद दूब और हरताल को एकत्र मिला कर जो

तिलक करता है उसको देखते ही लोग मोहित हो जाते हैं॥१०॥

बिल्वपत्रं गृहीत्वा तु छायाशुष्कं तु कारयेत्।
कपिलापयसा युक्तं वटीं कृत्वा तु गोलकीम्।
एभिस्तु तिलकं कृत्वा मोहयेत् सर्वतो जगत्॥११॥

अर्थ—बेल का पत्र लाकर छाया मे सुखा लेवे जब वह सूख जाय तो उसमे कपिला गौका दूध मिला कर उसकी गोली बना ले। इसका तिलक करने से भी समस्त संसार मोहित होता है॥ ११॥

मन्त्रः।

ॐ उड्डामरेश्वराय सर्वजगन्मोहनाय अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं हुं फट् स्वाहा॥

लक्षजपेन सिद्धिः। सप्तवाराभिमन्त्रितं कुर्यात्।

इति श्रीउड्डीशतन्त्रे रावणेश्वरसम्वादे मोहनप्रयोग वर्णनं नाम तृतीयः पटलः समाप्तः॥ ३॥

विधिः—उपरोक्त मन्त्र एक लाख जप करने से सिद्ध होता है। इस मन्त्र से सात बार अभिमन्त्रित करके पीछे से

तिलक लगाना चाहिये ।

इति श्री उड्डीशतन्त्रे रावणेश्वरसम्वादे भाषाटीकासहिते मोहनप्रयोगवर्णनं नाम तृतीयः पटलः समाप्तः ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थः पटलः ।

जलस्तम्भनम् ।

ईश्वर उवाच ।

अथाग्रे सम्प्रवक्ष्यामि प्रयोगं स्तंभनाभिधम् ।
यस्य साधनमात्रेण सिद्धिः करतले भवेत् ॥१॥

अर्थ—श्री शिवजी बोले कि अब आगे स्तंभन अभिधान वर्णन करता हूँ जिसका साधन कर लेने से सिद्धि हाथ में हो जाती है ॥ १ ॥

तत्रादौ कथयिष्यामि जलस्तंभनमुत्तमम् ।
कुलीरनेत्रदंष्ट्राश्च रुधिरं मांसमेव च ॥ २ ॥
हृदयं कच्छपस्यैव शिशुमारवसा ततः ।
विभीतकस्य तैलेन।सर्वाण्येकत्र सिद्धयेत् ।

एभिः प्रलेपनं कुर्याज्जले तिष्ठेद्यथासुखम् ॥३॥

अर्थ—अब पहिले श्रेष्ठ जल का स्तंभन वर्णन करता हूँ। कुलीर अर्थात् गँगटा की आंख, दांत, रक्त और कछुआ का हृदय, और शिशुमार [एक प्रकार को जल जन्तु] को चर्वी और भिलावे का तेल इन सब को एक मे पका कर शरीर पर इसका लेप कर ले तो जल पर सुख पूर्वक ठहरा रहे अर्थात् जल मे न डूबे ॥ २ ॥ ३ ॥

उरसस्य वसा ग्राह्या नक्रस्य नकुलस्य च ।
डुण्डुभस्य शिरोग्राह्यं सर्वाण्येकत्र कारयेत् ।
विभीतकस्य तैलेन सिद्धं कुर्यात् यथाविधि॥५॥
तैलं पक्त्वाऽयसे पात्रे कृष्णाष्टम्यां समाहितः ।
शंकरस्यार्चनं कृत्वा मूर्ध्नां कृत्वा नमस्क्रियाम्॥६॥
अष्टाधिकसहस्रं तु चाज्यहोमं ततश्चरेत् ।
लेपं कृत्वाऽथ मन्त्रेण ततः सिद्धिः प्रजायते॥७॥

मन्त्रः ।

ॐ नमो भगवते जलं स्तंभय हुं फट् स्वाहा ॥

अर्थ—भिलावे के तेल मे सर्प, नक्र और नेउला की चर्बी

तथा डुण्डुभ का शिर विधिपूर्वक पकाले जब वह परिपक्व हो जाय तब उसको यत्न सहित लोहे के पात्र मे रख दे। फिर कृष्णपक्ष की अष्टमी को शंकर की पूजा करके शिरसा उनको नमस्कार करे और उपरोक्त मन्त्र से एक हजार आठ बार घृत का हवन करके उसी मन्त्र को पढ़ता हुआ शरीर पर उक्त तेल का लेप करने से सिद्धि प्राप्त होती है ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥

अथ अग्निस्तम्भनम् ।

मण्डूकस्य वसा ग्राह्या कर्पूरेणैव संयुता ।
लेपमात्राच्छरीराणामग्निस्तंभः प्रजायते ॥८॥

अर्थ—मेढ़क की चर्बी मे कपूर मिला कर शरीर पर लेप करने से अग्नि का स्तंभन हो जाता है ॥ ८ ॥

कुमारीरसलेपेन किंचित् वस्तु न दह्यते ।
अग्निस्तंभन योगोऽयं नान्यथा मम भाषितम् ॥९॥

अर्थ—घिकुवार के रस का लेप कर लेने से कोई वस्तु नहीं जलती। मेरा कहा हुआ यह अग्निस्तंभन का प्रयोग मिथ्या नहीं है ॥ ९ ॥

आज्यं शर्करया पीत्वा चर्वयित्वा न नागरम् ।
तप्तं लौहं मुखे क्षिप्तं वक्त्रं न दह्यते क्वचित् ॥१०॥

अर्थ—पहिले पानी में मिला कर शक्कर पीले और ऊपर से सोंठ चबा कर जलता हुआ लोहा मुख मे रख लेने से कुछ भी मुख नहीं जलता ॥ १० ॥

अथ आसनस्तम्भनम् ।

श्वेतगुंजाफलं क्षिप्त्वा नृकपाले तु मृत्तिकाम् ।
बलिं दत्त्वा तु दुग्धस्य तस्य वृक्षो भवेद्यदा ॥११॥
तस्य शाखा लता ग्राह्या यस्याग्रे तां विनिक्षिपेत् ।
तस्य स्थाने भवेत् स्तंभः सिद्धयोग उदाहृतः १२

अर्थ—मनुष्य के कपाल में अर्थात् खोपड़ी मे मिट्टी भर कर उसमें सफेद घुंघुची को बीज बो देवे और दूध से उसको सींचता रहे। जब उसका वृक्ष उत्पन्न हो जाय तब उसकी डार और लता अर्थात् पुष्प पत्र आदि लेकर जिसके सन्मुख उसको छिड़क दे वह उसी स्थान मे स्तंभित हो जाय और दूसरे स्थान मे न जा सके। यह परीक्षित प्रयोग है ॥११॥१२॥

मन्त्रः ।

ॐ नमो दिगम्बराय अमुकस्यासनस्तंभनं कुरुकुरु स्वाहा ॥

अयुतजपात् सिद्धिः ।

विधि।—उपरोक्त मन्त्र से ऊपर लिखी हुई घुंघुची की

शाखा लता अभिमन्त्रित करके जिसका आसन स्तंभन करना हो उसके सन्मुख उसको डाल दे। इस मन्त्र मे जहां "अमुका शब्द है वहां जिसके ऊपर प्रयोग करना हो उसका नाम लेना चाहिये। दशहजार जप करने से इस मन्त्र की सिद्धि होती है"

अथ बुद्धिस्तंभनम्।

उलूकस्य कपेर्वापि ताम्बूल यस्य दापयेत्।
विष्ठा प्रयत्नतस्तस्य बुद्धिस्तंभःप्रजायते॥ १३॥

अर्थ-उल्लू अथवा बन्दर की विष्ठा पानमें रख कर. जिसको खिला दे उसकी बुद्धि स्तंभित हो जाय॥ १३॥

पुष्यार्केऽन्हि समादाय खरमञ्जरी मूलकम्।
पिष्ट्वा लिपेच्छरीरे स्वे शस्त्रस्तंभः प्रजायते॥१४॥

अर्थ—पुष्य नक्षत्र की संक्रान्ति में खरमञ्जरी की जड़ ले आवे फिर उसको रगड़ कर शरीर पर उसका लेप कर ले तो शस्त्रस्तंभन हो जाय अर्थात् शस्त्रका चोट न लगे॥ १४॥

खर्जूरी मुखमध्यस्था कटिबद्धा च केतकी।
भुजदण्डस्थिते चार्कै सर्वशस्त्रनिवारणम्॥ १५॥

अर्थ—मुखमें खजूर की कमर में केतकी तथा भुजा पर आँककी जड़ बाँध लेनेसे सब प्रकार के शस्त्रों का निवारण हो जाता है॥ १५॥

गृहीत्वा रविवारे तु बिल्वपत्रं च कोमलम् ।
लेपः शस्त्रस्तंभकश्च पिष्ट्वा विषसमं तथा ॥१६॥

अर्थ—रविवार के दिन कोमल कोमल बेलके पत्तेको कमल नालके साथ पीस कर शरीर पर लेप करनेसे शस्त्रस्तंभन हो जाता है ॥ १६ ॥

मन्त्रः ।

॥ ओं नमो अघोररूपाय शस्त्रस्तंभनं कुरु कुरु स्वाहा ॥

अयुतजपात् सिद्धिः ।

विधिः—ऊपर लिखे हुए शस्त्रस्तम्भन के मन्त्र से लेप करना चाहिये । दश हजार जप करने से यह मन्त्र सिद्ध होता है ।

अथ मेघस्तंभनम् ।

इष्टकाद्वयमादाय सम्पुटं कारयेन्नरः ।
चिताङ्गारेण संलेख्य भूस्थं स्तंभनमेघकम् ॥१७॥

मन्त्रः ।

॥ ओं नमो नारायणाय मेघस्तंभनं कुरु कुरु स्वाहा ॥

अयुतजपात् सिद्धिर्भवति ।

अर्थ—चिता के कोयले से दो ईंटे पर मेघ लिखे फिर उपरोक्त मन्त्र से अभिमन्त्रित करे और उसको सम्पुट कर के पृथिवी में गाड़दे तो मेघका स्तम्भन हो जाय अर्थात् पानी न बरसे । यह मन्त्र दश हजार जप करने से सिद्ध होता है ॥१७॥

अथ निद्रास्तंभनम् ।

मूलं गृहीत्वा मधुकं पिष्ट्वा नस्यं समाचरेत् ।
मधुना बृहतीमूलैरञ्जयेल्लोचनद्वयम् ।
निद्रास्तंभो भवेत्तस्य नान्यथा मम भाषितम् ॥१८॥

मन्त्रः ।

ओं नमो नृसिंहाय निद्रास्तंभनं कुरु कुरु स्वाहा

अर्थ—कटेली की जड़को सहद में पीस कर और उपरोक्त मन्त्रसे अभिमन्त्रित करके नस ले अथवा दोनों नेत्रों में उसका अंजन लगाले तो निद्रास्तम्भन हो जाय अर्थात् नींद न आवे ॥ १८ ॥

अथ गोमहिष्यादिस्तंभनम् ।

उष्ट्रस्यास्थि चतुर्दिक्षु निखनेद्भूतले ध्रुवम् ॥

गोमहिष्यादिकस्तंभे सिद्धयोग उदाहृतः ॥१६॥

अर्थ-जहाँ गौ भैंस रहती हों वहाँ चारो ओर खोद कर ऊँट की हड्डी गाड़दे तो अश्व गौ भैंस आदिका स्तम्भन हो जाय। यह परीक्षित प्रयोग है ॥ १६ ॥

उष्ट्रलोमं गृहीत्वा तु पशूपरि विनिक्षिपेत् ।
पशूनां भवति स्तंभः सिद्धयोग उदाहृतः ॥२०॥

अर्थ—पशुओं के ऊपर ऊँटका लोम डाल देनेसे पशुओं का स्तम्भन हो जाता है। यह भी परीक्षित प्रयोग है ॥ २० ॥

हरितालरसेनैव रविपत्रे समालिखेत् ।
अस्यनामोद्यानमध्ये ईशाने स्थापयेत्ततः ।
मुखस्तंभनकं तस्य नान्यथा मम भाषितम् ॥२१॥

अर्थ-आकके पत्रपर हरताल के रससे जिस का नाम लिख कर वाटिकामें ईशान कोणमें गाड़दे उसका मुख स्तम्भन हो जाय अर्थात् वह बोल न सके। यह प्रयोग मिथ्या नहीं हो सकता ॥ २१ ॥

अथ सैन्यस्तंभनम् ।

रविवारे गृहीत्वा तु श्वेतगुंजाफलं शुभम् ।

निखनेच्च स्मशाने वै पाषाणं तत्र दापयेत् ॥२२॥
अष्टौ च योगिनी पूज्या रौद्री माहेश्वरी तथा ।
वाराही नारसिंही च वैष्णवी च कुमारिका ॥२३॥
लक्ष्मी ब्राह्मी च सम्पूज्या गणेशो वटुकस्तथा ।
क्षेत्रपालः सदा पूज्यः सैन्यस्तम्भो भविष्यति ॥२४॥
पृथक् पृथक् बलिं दत्त्वा दशानामविभागतः ।
मद्यंमांसं तथा पुष्पं धूपं दीपावली क्रिया ॥२५॥

मन्त्रः ।

ॐ नमः कालरात्रि त्रिशूल धारिणि मम शत्रु सैन्यस्तंभनं कुरु कुरु स्वाहा ।

अयुतजपात् सिद्धिः ।

अर्थ–रविवार के दिन सफेद घुंघुची का फल स्मशान में गाड़ कर एक पत्थर से उसको दबादे । फिर आठो योगिनी–रौद्री, माहेश्वरी, वाराही, नारसिंही, वैष्णवी, कुमारी, लक्ष्मी तथा ब्रह्माणी–और गणेश, वटुक, क्षेत्रपाल तथा दशो दिक्पालों को धूपदीप तथा पुष्प आदि से पूजा करके मदिरा

भनप्रयोगवर्णनं नाम चतुर्थः पटलः समाप्तः ॥ ४ ॥

अर्थ—मङ्गलवार के दिन उल्लू और कौवे के पर से भोज पत्र पर गोरोचन से उपरोक्त मन्त्रके सहित शत्रुका नाम लिखे फिर उक्तपरों के सहित उस भोज पात्र का जन्म बना कर उसे गलेमें बांध ले ओर सेना के सम्मुख चला जाय तो मैं सत्य कहता हूं कि केवल उसके शब्द से अर्थात् बोलने से राजा प्रजा, हाथी घोड़ा आदि सब सेना अवश्य भाग आयँ ॥ इस मन्त्र की सिद्धि दश हजार जप करने से होती है ॥ २६ । २७ ॥ २८ ॥

इति श्री उड्डीशतन्त्रे रावणेश्वरसम्वादे भाषाटीकासहिते स्तम्भनप्रयोगवर्णनं नाम चतुर्थः पटलः समाप्तः ॥ ४ ॥

—:*:—

अथ पंचमः पटलः ।

—❀—

विद्वेषणम् ।

ईश्वर उवाच ।

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि योगं विद्वेषणाभिधम् ।
महाकौतुकरूपं च शृणु रावण यत्नतः ॥ १ ॥

अर्थ—श्री शिवजी बोले हे रावण ! अब मैं महा कौतुक

स्वरूप विद्वेषण का प्रयोग वर्णन करूंगा तुम ध्यान से सुनो॥१॥

गजदन्तं गृहीत्वा च सिंहदन्तं तथैव च ।
पेषयेन्नवनीतेन तिलकं द्वेषकारकम् ॥ २ ॥

अर्थ—मक्खन में हाथी और सिंहके दांत का चूर्ण मिलाया हुआ तिलक विद्वेषण करनेवाला है अर्थात् इसका तिलक करने से विद्वेषण हो जाता है ॥ २ ॥

एकहस्ते काकपक्षमुलूकस्य करे परे ।
मन्त्रयित्वा मेलयित्वा कृष्णसूत्रेण वेष्टयेत् ॥३ ॥
अंजलीं च जले चैव तर्पयेत् हस्तपक्षकं ।
एवं सप्तदिनं कुर्यादष्टोत्तरशतं जपेत् ॥ ४ ॥

अर्थ—एक हाथ में कौवा और दूसरे हाथमें उल्लू का पक्ष ले कर दोनों को विद्वेषण मन्त्रसे अभिमन्त्रित करै फिर दोनों को एकत्रित करके काले डोरे से उसको बाँध दे और उक्त पक्षको दोनों हाथसे पकड़ कर जलसे तर्पण करै । इसी प्रकार सात दिन तक एक सौ आठ बार विद्वेषण का मन्त्र पढ़ता हुआ तर्पण करै तो विद्वेषण हो जाय ॥ ३ । ४ ॥

गृहीत्वा गजकेशं च सिंहकेशं तथैव च ।

गृहीत्वा पादपांसुं च पुत्तलीं निखनेद्भुवि ॥५॥
अग्निस्तस्योपरि स्थाप्यो मालतीकुसुमं हुनेत् ।
विद्वेषं कुरुते नूनं नान्यथा च मयोदितम् ॥६॥

अर्थ-जिनमें विद्वेषण करना हो उनके पैरके नीचे की मिट्टी लाकर पुतली बनावे फिर उस पुतली में हाथी और सिंहका बाल लपेट कर उसको पृथिवी में गाड़दे और ऊपर वेदी बनाकर मालती के पुष्पसे हवन करै तो मैं सत्य कहता हूँ विद्वेषण हो जाय ॥ ५ ६ ॥

ब्रह्मदन्डीं समूलां च काकजङ्घासमन्विताम् ।
जातिपुष्परसैर्भाव्या सप्तरात्रं पुनः पुनः ॥ ७ ॥
ततो मार्जारमूत्रेण सप्ताहं भवायेत् पुनः ।
एष धूपः प्रदातव्यो शत्रुगोत्रस्थमध्यतः ॥ ८ ॥
यथा गन्धं समाघ्राति तथा सर्वस्समं कलिः ।
महद्विद्वेषणं याति सुहृद्भिर्बान्धवैः सह ॥ ९ ॥

अर्थ-जड़ सहित ब्रह्मदण्डी और कौवा गोड़ी को सात दिन तक चमेली के फूलके रसमें और सात दिन तक बिल्लीके मूत्रमें भिगावे । पश्चात् शत्रुके गोत्रके इसका धूपदे तो जिस

प्रकार इसकी गन्ध आती जाती है उसी प्रकार शत्रुके मित्र तथा बान्धवों में महान् विद्वेष हो जाय ॥ ७ ॥ ८ ॥९॥

गजकेसरिणोर्दन्तान्नवनीतेन पेषयेत् ।
यन्नाम्ना हूयते चाग्नौ तयोर्विद्वेषणं भवेत् ॥१०॥

अर्थ—मक्खन में हाथी और सिंहके दांतका चूर्ण मिला कर जिनके नाम से अग्निमें उसका हवन करै उनमें विद्वेषण हो जाय ॥ १० ॥

गृहीत्वा महिषं केशमश्वकेशेन संयुतम् ।
सभायां दीयते धूपो विद्वेषो जायते क्षणात् ॥११॥

अर्थ-भैंसे और घोड़े का बाल एकत्रित करके जिस सभा में इसका धूप दे उस सभामें क्षण भरमें विद्वेषण हो जाय॥११॥

मार्जार्या मूषिकायाश्च विष्ठामादाय यत्नतः ।
विद्वेष्य पादतलयोर्मृदमादाय मेलयेत् ॥ १२ ॥
जपेन्मन्त्रशतं कुर्यान्नरपुत्तलिकां शुभाम् ।
नीलवस्त्रेण संवेष्ट्य तद्गृहे निखनेद्यदि ॥१२॥
विद्वेषो जायते शीघ्रं बन्धूना पितृपुत्रयोः ॥१३॥

अर्थ-जिसमें विद्वेषण करना हो उसके पैरके नीचे की

मिट्टीमें विल्लीको विष्ठा मिला कर पुतली बनावे फिर उस पुतली को नीले वस्त्रमें लपेट कर विद्वेषण के मन्त्र से एक सौ आठ बार अभिमन्त्रित करके यदि जिसमें विद्वेषण करना हो उसके घरमें गाड़ दे तो उसके बान्धवों तथा पिता पुत्रमें शीघ्र विद्वेष हो जाय ॥ १२ । १३ ॥

एकहस्ते काकपक्षमुलूकस्य करे परे ।
मन्त्रयित्वा मेलयित्वा कृष्णसूत्रेण वेष्टयेत् ॥१३॥
यद्गृहे निखनेद्भूमौ वितपस्तस्य जायते ।
पुनश्च सुस्थीकरणं घृतगुग्गुलधूपतः ॥ १४ ॥

अर्थ—एक हाथ में कौआ और दूसरे हाथमें उल्लूका पङ्ख लेकर विद्वेषण मन्त्रसे दोनों को अभिमन्त्रित कर फिर काले सूत से दोनों को एकत्रित कर बांधदे । फिर जिसके घरमें पृथिवी खोद कर इसको गाड़ उसके घरमें विद्वेष हो जाय और जब शान्त करना हो तो घी और गुग्गुल का धूप दे दे ॥ १३ ॥ १४ ॥

मन्त्रः ।

॥ ॐ नमो नारायणाय अमुकस्या अमुकेन सह विद्वेषणं कुरु कुरु स्वाहा ॥

लक्षजपात् सिद्धिः ।

इति श्री उड्डीशतन्त्रे रावणेश्वरसम्वादे विद्वेषण प्रयोगवर्णनं नाम पंचमः पटलः समाप्तः ॥ ५ ॥

विधिः—इसी मन्त्र से उपरोक्त प्रयोगों को करना चाहिये । इसमें जहां अमुक शब्द है वहां जिसमें विद्वेषण करना उसका नाम लेना चाहिये । यह मन्त्र एक लाख जप करने से सिद्ध होता है ।

इति श्री उड्डीशतन्त्रे रावणेश्वरसम्वादे भाषाटीसहिते
विद्वेषणप्रयोगवर्णनां नाम पञ्चमः पटलः
समाप्तः ॥ ५ ॥

—:o:—

अथ षष्ठः पटलः ।

—❀—

उच्चाटनम् ।

ईश्वर उवाच ।

येनाहृतं गृहं क्षेत्रं कलत्रं धनपुत्रकम् ।
उच्चाटनं वधं कुर्यात् शृणु रावण यत्नतः ॥ १ ॥

अर्थ—श्री शिवजी बोले हे रावण ! जो घर खेत, स्त्री,

धन तथा पुत्रको छीन लिये हो उसके ऊपर उच्चाटन करके उसका वध करना चाहिये । इस लिये उच्चाटन का प्रयोग तुम ध्यानसे सुनो ॥ १ ॥

श्वेतलांगलिकामूलं स्थापयेद्यस्य वेश्मनि ।
निखनेत् तु भवेत्तस्य सद्य उच्चाटनं ध्रुवम् ॥ २ ॥

अर्थ-जिसको उच्चाटन करना हो उसके घरमें कलिहारी की जड़ खोद कर गाड़ दे तो उसका उच्चाटन शीघ्र हो जाय ॥ २ ॥

ब्रह्मदण्डी चिताभस्म शिवलिंगे प्रलेपयेत् ।
सिद्धार्थेन च संयुक्तं शनिवारे क्षिपेद्गृहे ॥ ३ ॥
उच्चाटनं भवेत्तस्य जायते मरणान्तिकम् ।
बिना मन्त्रेण सिद्धिश्च सिद्धयोग उदाहृतः॥४॥

अर्थ-शिवलिङ्ग के ऊपर ब्रह्मदण्डी और चिताकी भस्म काले परके सफेद सरसो सहित शनिवार के दिन जिसके घरमें उस लिङ्गको फेंकदे उसका उच्चाटन हो जाय । यह परीक्षित प्रयोग है । यह विना मन्त्र के सिद्ध होता है ॥ ३ । ४ ॥

गृहीत्वौदुम्बरं कीलं मन्त्रेण चतुरंगुलम् ।

निखनेद्यस्य शयने तस्योच्चाटनकं भवेत् ॥ ५ ॥

अर्थ–जिसको उच्चाटन करना उसके शयन करने के स्थान में गूलर के लकड़ी की चार अंगुल की कील उच्चाटन मन्त्रसे अभिमन्त्रित करके गाड़ देनेसे उसका उच्चाटन हो जाता है ॥५॥

काकोलूकस्य पक्षश्च यद्गृहे निखनेत् रवौ ।
यन्नाम्ना मन्त्रयोगेन समस्तोच्चाटनं भवेत् ॥६॥

अर्थ–कौवा और उल्लूका पङ्ख जिसका उच्चाटन करना हो उसके नाम के सहित उच्चाटन के मन्त्रसे अभिमन्त्रित करके उसके घरमें गाड़ देनेसे सबसे उसको उच्चाटन हो जाता है ॥ ६ ॥

नरास्थिकीलकं भौमे निखनेच्चतुरंगुलम् ।
तत्र मूत्रं तु कुर्यात् तस्योच्चाटनकं ध्रुवम् ॥ ७ ॥

अर्थ–मङ्गलवार के दिन मनुष्यके हड्डी की चार अंगुलकी कील गाड़दे तो उसपर जो मूत्र करै उस को उच्चाटन हो जाय ॥ ६ ॥

सिद्धार्थं शिवनिर्माल्यं निखनेद्यो गृहे जनम् ।
उच्चाटनं भवेत्तस्य उद्धृते च पुनः सुखी ॥ ८ ॥

मन्त्रः ।

॥ ॐ नमो भगवते रुद्राय करालदंष्ट्राय अमुकं पुत्रबान्धवैःसह हन हन दह दह पच पच शीघ्रमुच्चाटय शीघ्रमुच्चाटय हुं फट् स्वाहा ॥

अयुतजपात् सिद्धिः ।

अर्थ-उपरोक्त मन्त्रसे शिवनिर्माल्य-अर्थात् शिवजी का प्रसाद अथवा जल और सफेद सरसों अभिमन्त्रित करके जिस मनुष्य के घरमें खोद कर दोनों वस्तुओं को गाड़दे उस को उच्चाटन हो जाय। और जब उसको उखाड़ ले तो वह सुखी हो जाय। यह मन्त्रदश हजार जप करने से सिद्ध होता है ॥ ८ ॥

मध्यान्हे लुठते भूमौ गर्दभो यत्र धूलिकां ।
उदङ्मुखे प्रतीच्यां तु गृहीत्वा वामपाणिना॥९॥
यद्गृहे क्षिप्यते धूली तस्योच्चाटनकं भवेत् ।
एवं सप्त दिनं कुर्यात् गृहेशोच्चाटनं भवेत् १०

अर्थ-जहां दो पहर के समय गदहा लोटा हो वहां की धूल पश्चिम अथवा पूर्वमुख खड़े हो कर उठा लावे । फिर इस,

धूलको जिसके घरमें फेक दे उसका उच्चाटन हो जाय । इस प्रकार सात दिन तक करते रहने से गृहके स्वामी का उच्चाटन हो जाता है ॥ ९ ॥ १० ॥

मन्त्रः ।

॥ ॐ नमो भीमास्याय अमुकगृहे उच्चाटनं कुरु कुरु स्वाहा ॥

अयुतजपात् सिद्धिः ।

इति उड्डीशतन्त्रे रावणेश्वरसम्वादे उच्चाटनप्रयोग वर्णनं नाम षष्ठः पटलः समाप्तः ॥ ६ ॥

विधिः—उपरोक्त प्रयोग को इस मन्त्रसें अभिमन्त्रित करके प्रयोग करने सें कार्य सिद्ध होता है । इस मन्त्रमें जहाँ "अमुक" शब्द हैं वहां जिसको उच्चाटन करना उसका नाम लेना चाहिये । यह मन्त्र दश हजार जप करने से सिद्ध होता है ।

इति श्री उड्डीशतन्त्रे रावणेश्वरसम्वादे भाषाटीकासहिते उच्चाटनप्रयोगवर्णनं नाम षष्ठः पटलः समाप्तः ॥ ६ ॥

—:*:—

अथ सप्तम् पटलः ।
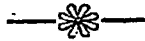
वशी करणम् ।

ईश्वर उवाच ।

अथाग्रे कथयिष्यामि वशीकरणमुत्तमम् ।
राजप्रजापशूनां च शृणु रावण यत्नतः ॥ १ ॥

अर्थ-श्री शिवजी बोले हे रावण ! अब आगे राजा, प्रजा तथा पशूको वशमें करलेने का उत्तम प्रयोग मैं वर्णन करता हूं । तुम ध्यान से सुनो ॥ १ ॥

प्रियङ्गुं तगरं कुष्ठं चन्दनं नागकेशरम् ।
धत्तूर पंचंगं सम भागं तु कारयेत् ॥ २ ॥
धायायां वटिका कार्या प्रदेया खानपानयोः ।
पुरुषो वाथ नारि च यावज्जीवं वनशं येत् ।
सप्ताहं मन्त्रितंकृत्वा मन्त्रेणानेव मन्त्रवित् ॥ ३ ॥

अर्थ-कांगनी, तगर, कूट, चन्दन, नागकेसर और धतूरेके पंचांग (जड़, फल, फूल, पत्र तथा शाखा) का समान भाग

एकत्रित कर उसकी गोली बना कर छायामें सुखा ले और निम्नलिखित मन्त्र से सातवार अभिमन्त्रित करके उसे जिस स्त्री अथवा पुरुष को खिला दे वह अपने जीवन भर उसके वशीभूत हुआ रहे ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

मन्त्रः ।

ॐ नमो भगवते उड्डामरेश्वराय मोहय मिल ठःठः

एकचित्तस्थितो मन्त्री जपेन्मन्त्रमतन्द्रितः ।
त्रिंशत्सहस्रसंख्याकं सर्वलोकवशंकरम् ॥ ४ ॥

विधिः—इस मन्त्र का एकाग्रचित्तसे तीश हजार जप करने से यह सिद्ध होता है फिर इस मन्त्रसे अभिमन्त्रित करके वशीकरण का प्रयोग करने से सब लोग वशमें होते हैं ।

बिल्वपात्राणि संगृह्य मातुलुंगं तथैव च ।
अजादुग्धेन संपिष्ट्वा तिलकं लोकवश्यकृत् ॥ ५ ॥

अर्थ—बकरी के दूधमें बेलकी पत्ती और बिजौरा नीमू पीस कर तिलक करने से सब लोग वशमें हो जाते है ॥ ५ ॥

कुमारीकन्दमादाय विजयाबीजसंयुतम् ।
मस्तके तिलकं कुर्यात् वशीकरणमुत्तमम् ॥ ६ ॥

अर्थ—घिकुवार की जड़ और भांगके बीज को एकमें मिला

कर तिलक करनेसे उत्तम वशीकरण होता है ॥६॥

गोरोचनं वंशनेत्रं मत्स्यपित्तं च कुंकुमम् ।
चन्दनं काकजङ्घा च मूलं भागसमं नयेत् ॥७॥
वाप्यादिकजलेनैव पेषयित्वा कुमारिकाम् ।
हस्तेन गुटिकां कृत्वा छायायां च विशोषयेत्॥८॥
ललाटे तिलकं कुर्यात् यः पश्यति वशी भवेत् ।
राजद्वारे न्याययुद्धे सर्वत्र विजयी भवेत् ॥९॥

अर्थ–गोरोचन, वंशलोचन, मछली की, पित्त, केशर चन्दन और काचजंघा की जड़ यह सब समान भाग बावली आदिके जलमें कुमारी कन्याके हाथसे पिसवा कर गोली बनवा ले. फिर इसको छायामें सुखा कर मस्तक पर इसका तिलककरै तो उसको जो देखे वह उसके वशमें हो जाय । इसका तिलक करनेसे वाला राजसभा तथा न्यायालय आदिमें सर्वत्र विजयी होता है ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

अथ राजवशीकरणम् ।

कुंकुमं चन्दनं चैव रोचनं शशिमिश्रितम्
गवां क्षीरेण तिलकं राजवश्यकरं परम् ॥ १० ॥

अर्थ-गौके दूधमें कुकुम, चन्दन गोरोचन और भीमसेनी कपूर मिलाया हुआ तिलक राजाओं को वशमें करने के लिये उत्तम है ॥ १० ॥

अथ मुखस्तंभनम् ।

चम्पकस्य तु वन्दाकं करे बध्वा प्रयत्नतः ।
संगृह्यतु भरण्यऽर्के पुष्यार्के वा विधानतः ॥११॥
राजानं तत् क्षणादेव मनुष्यो वशमानयेत् ।
करे सौदर्शनं मूलं बध्वा राजप्रियो भवेत् ॥१२॥

अर्थ—भरणी अथवा पुष्य नक्षत्रमें विधिपूर्वक चम्पा का वन्दाक लाकर जो हाथ में बांधता है उसको देखते ही राजा और मनुष्य उसके वशमें हो जाते हैं । सुदर्शन की जड़ भी जो हाथमें बांधता है वह राजाको प्रिय हो जाता है॥ ११ ॥ १२ ॥

मन्त्रः ।

ॐ ह्रीं सः अमुकं मे वशमानय स्वाहा ।
पूर्वमेव सहस्रं जप्त्वाऽनेन मन्त्रेण सप्ताभिमन्त्रितं तिलकं कार्यम्

विधिः-उपरोक्त मन्त्र का पहिले हजार जप करके इसको

सिद्ध कर ले पश्चात् प्रयोग के समय सात बार इस मन्त्र से अभिमन्त्रित करके तिलक करना चाहिये ।

अथ स्त्रीवशीकरणम् ।

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि योगानां सारमुत्तमम् ।
यस्य विज्ञानमात्रेण नारी भवति किंकरी ॥१३॥

अर्थ—अब योगों का सार अर्थात् तत्त्व वर्णन करता हूँ जिसको जान लेने स्त्री दासी हो जाती है ॥ १३ ॥

उसीरं चन्दनं चैव मधुना सह संयुतम् ।
गलहस्तप्रयोगोऽयं सर्वनारीप्रसाधकः ॥ १४ ॥

अर्थ—सहदमें खस और चन्दन मिला कर तिलक करले फिर जिस स्त्री को वशमें करना हो उसके गलेमें हाथ डाले तो वह वशमें हो जाय। यह प्रयोग सब स्त्रियों को वशमें करने वाला है ॥ १४ ॥

चिताभस्म बचा कुष्ठं कुंकुमं रोचनं समम् ।
चूर्णं स्त्री शिरशि क्षिप्तं वशीकरणाद्भुतम् ॥१५॥

अर्थ—चिता की भस्म, बच, कूट, कुंकुम तथा गोरोचन के समान भाग का चूर्ण स्त्री के शिर पर छिड़कने से अद्भुत वशीकरण होता है ॥ १५ ॥

कृष्णोत्पलं मधुकरस्य च पक्षयुग्मं
मूलं तथा तरगजं सितकाकजङ्घा।
यस्याः शिरोगतमिदं विहितं विचूर्णं
दासी भवेज्झटिति सा तरुणी विचित्रम् १६

अर्थ—काला कमल, भौंरा का दोनों पंख अगर की जड़ और सफेद कौआ गोड़ी का चूर्ण बना कर जिस स्त्री के मस्तक पर छिड़के वह शीघ्र दासी हो जाय॥ १६॥

सव्येन पाणिकमलेन रतावसाने,
यो रेतसा निजभवेन विलासिनीनाम्।
वामं विलम्पति पदं सहसैव यस्या,
वश्यैव सा भवति नात्र विकल्पभावः॥१७॥

अर्थ—मैथुन कर लेने के पश्चात् अपने बायें हाथ से अपना वीर्य जो उस स्त्री के बायें चरण के तलवे में मलता है वह स्त्री अवश्य उसके वशमें हो जाती है॥ १७॥

सिंधूत्थमाक्षिक कपोतमलांश्च पिष्ट्वा
लिंगं विलिप्य तरुणीं रमते नवोढाम्।

सोन्यं न याति पुरुषं मनसापि नूनं,
दासी भवेदतिमनोहरदिव्यमूर्तिः ॥ १८ ॥

अर्थ—जो मनुष्य सहदमें सेंधा लवण और कबूतर की विष्ठा पीस कर अपने लिङ्गपर इसका लेप करके जिस तरुणी स्त्री से मैथुन करता है—वह दूसरे पुरुष के निकट जाने की इच्छा भी नहीं करती और उसको स्वरूपवान् मान कर सर्वदा उसकी दासी बनी रहती है ॥ १८ ॥

गोरोचनाशिशिरदीधितिशंभवीर्यैः
काश्मीरचन्दनयुतैः कनकद्रवैश्च, ।
लिप्त्वा ध्वजं परिरमत्यबलां नरो यां,
तस्याः स एव हृदये मुकुटत्वमेति ॥ १९ ॥

अर्थ—जो मनुष्य धतूरे के रसमेंगोरोचन, कुमुद, पारा, केशर और चन्दन को पीस कर अपने लिंग पर इसका लेप करके जिस स्त्री से मैथुन करता है वह उसके हृदय में मुकुट के समान निवास करता है ॥ १९ ॥

लिंगस्थूलीकरणम् ।

लघुसूक्ष्मेन लिंगेन नैव तुष्यन्ति योषितः ।
तस्मात्तत्प्रीतये वक्ष्ये स्थूलीकरणमुत्तमम् ॥ २० ॥

अर्थ—छोटे और पतले लिंग से स्त्री सन्तुष्ट नहीं होती इस लिये उसको सन्तुष्ट करने के लिये लिंग को मोटा और लम्बा बनाने की उत्तम उपाय वर्णन करता हूँ ॥ २० ॥

कुष्ठस्य मातङ्गबलाबलानां,
वचाश्वगन्धागजपिप्पलीनाम् ।
तुरङ्गशत्रोर्नवनीतयोगा-
ल्लेपेन लिङ्गं मुसलत्वमेति ॥ २१ ॥

अर्थ—कूट, छोटी पीपल, दोनों खरैटी, वच, असगन्ध, गजपीपल तथा कनैल को मक्खन में मिला कर लिंग पर लेप करने से लिंग मूसल के समान हो जाता है ॥ २१ ॥

सलोध्रकाश्मीरतुरंगगन्धा,
मातंगगन्धा परिपाचितेन
तैलेन वृद्धिं खलु याति लिंगं,
वरांगनालोकमनोहरं तत् ॥ २२ ॥

अर्थ—तेल में लोंध, केसर, असगन्ध, पीपल तथा शालपर्णी को पका कर लिंग पर लेप करने से लिंग की वृद्धि होती है जिससे स्त्रियों का मन मोहित हो जाता है ॥ २२ ॥

हयारिपत्नीनवनीतमध्ये,
बचाबलाभागरसामयैश्च ।
लेपेन लिंगं सहसैव पुंसां,
लोहोपमं स्यादिति दृष्टमेतत् ॥ २३ ॥

अर्थ-भैंस के मक्खन में वच, खरैंटी तथा पारा मिला कर लिंग पर लेप करने से मनुष्य का लिंग शीघ्र लोहा के समान हो जाता है ॥ २३ ॥

भल्लातकास्थिजलशूकमथाब्जपत्र-
मन्तर्विमदह्य मतिमान्सह सैन्धवेन।
एतद्विरूढबृहतीफलतोयपिष्ट,
मालेपनं तुरगवद्विमलीकृतेऽङ्गे ॥ २४ ॥

अर्थ—भिलावे की गुद्दी, सेवार और कमल का पत्र, जला कर बड़ी कटेहली के सहित पानी में इन सबको पीस करके लिंग पर लेप करने से लिंग घोड़ा के लिंग के समान लम्बा और कठोर हो जाता है ॥ २४ ॥

वराहवसया लिङ्गं मधुना सह लेपयेत् ।

स्थूलं दृढं च दीर्घं च मासा लिंगं प्रजायते॥२५॥

अर्थ-शहद में शूकर की चर्बी मिला कर एक महीने तक लिंग पर लेप करने से लिंग स्थूल दृढ़ और दीर्घ हो जाता है ॥२५॥

अश्वगन्धावरी कुष्टं मांसीसिंहीफलान्वितम्।
चतुर्गुणेन दुग्धेन तिलतैलं विपाचयेत्।
स्तनलिंगकर्णपाणिवर्धनं भक्षणादितः॥ २६ ॥

अर्थ—असगन्ध, सतावर, कूट, जटामासी और कटेलीके फल को चौगुने दूध तथा तिल के तेल में पका कर लेप और भोजन आदि करने से स्तन, लिंग, कान तथा हाथ की वृद्धि होती है ॥ २६ ॥

तद्वच्च मुसली साज्या लेपाल्लिंगस्य दार्ढ्यकृत्।
पिप्पलीलवणक्षीरसितालेपोऽपि दीर्घकृत्॥२७॥

अर्थ—इसी प्रकार घी में मुसली के चूर्ण का लेप लिंग को दृढ़ करता है। तथा पीपल, सेंधालवण दूध और मिश्री का लेप भी लिंग को बढ़ाता है ॥ २७ ॥

मांसीं चोक्षफलं कुष्टमश्वगन्धं शतावरीम्।
तैले पक्त्वा प्रलेपेन लिंगस्थौल्यं भवेद् ध्रुवम्॥२८॥

अर्थ—जटामासी, बहेड़ा, कूट, असगन्ध और सतावर को

तेलमें पका कर लेप करै तो अवश्य लिंग मोटा हो ॥ २८ ॥

सूतको ह्यश्वगन्धा च रजनी गजपिप्पली
सिता युक्ता जलैः पिष्ट्वा मासैकं लेपयेत्तदा ।
अद्भुतं वर्द्धयेल्लिंगं योनिकर्णस्तनानि च ॥२६॥

अर्थ—पारा असगन्ध, हल्दी, गज पीपल तथा मिश्री को जलमें पीस कर एक मास तक इसका लेप करेतो लिंग, योनि, कान तथा स्तन को यह अद्भुत रीति से बढ़ा देता है ॥२६॥

अथ पतिवशीकरणम् ।

रोचनं मत्स्यपित्तं च मयूरस्य शिखां तथा ।
मधुसर्पिः समायुक्तं स्त्रीवरांगविलेपनम् ॥ ३० ॥
निभृते मैथुने भावे पतिर्दासो भविष्यति ।
रूपयौवनसम्पन्नां नान्यामिच्छेत्कदाचन ॥३१॥

अर्थ—घृत और शहदमें गोरोचन, मछलीकी पित्त, और मोर की शिखा (कचोरी) मिलार जो स्त्री अपनी भग पर इसका लेप करे और फिर और पतिसे मैथुन करे तो उस का पति उसका दास हो जाय और रुप तथा यौवन सम्पन्न दूसरी स्त्री की कभी इच्छा भी न करे ॥ ३० ॥ ३१ ॥

कुलत्थं विल्वपत्रं च रोचनं च मनःशिला ।
एतानि समभागानि स्थापयेत्ताम्रभाजने ॥ ३२॥
सप्तरात्रस्थिते पात्रे तैलमेवंपचेत्ततः ।
तत्तेन भगमालिप्य भर्तारमनुगच्छति ;
म्सप्राप्ते मैथुने भर्ता दासो भवति नान्यथा ३३

अर्थ—कुलथी, बेलपत्र, गोरोचन, और मनशालके समान भाग तांबेके पात्रमें रख कर सात दिन तक तेल में पकावे फिर इसको भग में लगा कर अपने पति से मैथुन करे तो निःसन्देह पति दास हो जाय ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

प्रियंगुं शतपुष्पं च कुंकुमं वंशरोचनम् ।
अश्वमूत्रेण लेपं च पुरुषाणां वशंकरम् ॥ ३४ ॥
निम्बकाष्ठस्य धूपेन धूपयित्वा भगं पुनः ।
या नारी रमयेत् कान्तं सा च तं दासतां नयेत्॥३५॥

अर्थ—जो स्त्री घोड़ेके मूत्रमें कांगनी, सौंफ, केशर, तथा वंशलोचन मिलाकरके अपने भग पर इसका लेप करतीहै और फिर नीम की लकड़ी का धूप देकर पति से मैथुन करती है वह पति को अपना दास कर लेती है ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

एरण्डतैलं शकुलस्य तैलं तथा मबिल्वस्यरसं गृहीत्वा।
संमर्दयेदूर्ध्वगहस्तकेन तदा स्तन नौ पतितौ कदापि॥

अर्थ—रेड़ी और मछली का तैल तथा बेल का रस एक में मिला कर स्तन पर हाथसे इसका मर्दन करने से स्तन नहीं गिरते अर्थात् कठोर हो जाते हैं ॥ ३६ ॥

श्रीपर्णीरसकर्काभ्यां तैलं सिद्धतिलोद्भवम् ।
तत्तैलं तिलकेनापि स्तनस्योपरि दापयेत्
काठिन्यं वृद्धतां यातः पतितौ चोत्थितौ च तौ॥३७॥

अर्थ—तिलक के तेल में श्रीपर्णी अर्थात् खम्भारी का रस और कर्क अर्थात् बिच्छू को पका कर स्तन पर लेप करने से स्तन का कठोरता और वृद्धि होती है तथा गिरे हुए स्तन उठ जाते हैं॥ ३७ ॥

वृद्धायाः कन्यकायाश्च त्ववालायाः पयोधरौ
श्वेतोद्भकुसुमं कृष्णाधेनोः पयसि संस्थितम्
पिष्ट्वा स्तनयुगे देयं भवेत् पीनपयोधरा ॥३८॥

अर्थ—काली गौके दूधमें सफेद मोथा पीस कर दोनो स्तनों पर इसका लेप करने से वृद्धस्त्री और कन्या के गौरे हुए स्तन मोटे हो जाते है॥ ३८ ॥

वचाश्वगन्धासंयुक्ता चाश्वरीपत्रकं तथा ।
गजपिप्पलिकायुक्तं सद्योऽमलजलेन च ॥३९॥
पेषयित्वा विधानेन लेपयेत्स्तनमण्डलें ।
नयते तु कदाचिद्वै चाम्रतालफलं तथा ॥४०॥

अर्थ—यदि स्तन गिर गये हों तो वच, असगन्ध की जड़ और पत्र तथा गज पीपल को स्वच्छ जलमें पीस कर स्तनों पर लेप करने से गिरे हुए स्तन शीघ्र ही आम तथा तालके फल समान हो जाते हैं ॥ ३९ ॥ ४० ॥

गम्भारिपत्रनीरं च तत् समं तिलतैलकम्
समानं जलभागं च दत्वापाकं समाचरेत् ॥४१॥
तेलशेखं परिज्ञाय वस्त्रेण शोधयेत् कुचौ
दिवा प्रलेपनादेव लोहत्वं जायते चिरात् ॥४२॥

अर्थ—गम्भीर के पत्ते का रस, उसके बराबर तिल का तेल और इन दोनों के बराबर जल मिला कर इसको पकावे जब जल और रस जल जाय और केवल तेल शेष रह जाय तब उसको वस्त्रसे छान ले इस तेल का केवल एक दिन स्तनों पर लेप करदे स्तन सर्वदा के लिये लोहे के समान कठोर हो जाते हैं ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

अथ योनिसंस्कारः ।

प्रक्षालयेत् निम्बकषाय तोयै-

र्निशाज्यकृष्णागरुगुग्गुलूनाम् ।

धूपेन योनिं निशि धूपयित्वा

नारी प्रमोदं विदधाति भर्तुः ॥ ४३ ॥

अर्थ—नीमके कशैले जलसे योनि धोकर रात्रिमें नीम हल्दी, घी काला अगर, तथा गुग्गुल की धूप दे कर जो स्त्री पतिसे मैथुन करती है वह अपने पतिको प्रसन्न कर लेती है अर्थात् उसका पति उससे प्रसन्न रहता है ॥ ४३ ॥

प्रक्षाल्य निंबस्य जलेन भूयः

तस्यैव बल्कलेन विलेपयेच्च

त्यजेद्यु स्त्याश्चिरकालभूतं,

गन्धम्बरांगस्य न संशयोऽत्र ॥ ४४ ॥

अर्थ-योनिको नीमके जलसे धो कर ऊपर से उसी की छाल का लेप करने से बहुत समय तक योनिमें दुर्गन्ध नहीं होती । इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥ ४४ ॥

अथ लोमनाशनम् ।

पलाश भस्मन्विडतालचूर्णं,
रम्भाम्बुमिश्रैरुपलिप्य भूयः
कन्दर्पगेहे मृगलोचनानां
रोमाणि रोहन्ति कदापि नैव ॥ ४५ ॥

अर्थ—पलाश और हरताल की भस्म को केला के जलमें मिला कर भग पर लेप करने से लोम गिर जाते हैं और फिर उत्पन्न नहीं होते ॥ ४५ ॥

एकः प्रदेयो हरिताल भागः,
पञ्चप्रदेया जलजस्य भागाः ।
सवस्तरोर्भस्मन एव पञ्च,
प्रोक्तश्च भागः कदलीजलार्द्राः ॥ ४६ ॥

अर्थ—केलेके जलमें एक भाग हरताल की भस्म, पांच शङ्खकी भस्म और पांच भाग पिलखन की भस्म मिला कर भग पर इसका लेप करने से बाल गिर जाते हैं ॥ ४६ ॥

तालकं शंखचूर्णं तु मंजिष्ठभस्म किंशुकम् ।
समभागप्रलेपेन रोमखण्डनमुत्तमम् ॥ ४७ ॥

अर्थ—हरताल और गन्धक का चूर्ण में जीठकी भस्म और पलाश के फूलके समान भागका लेप लोम नाश करने के लिये उत्तम होता है ॥ ४७ ॥

तालकं शंखचूर्णन्तु पिष्ट्वा च क्षारतोयकैः ।
तेन लिप्त्वा कचा घर्मे स्थिते गच्छन्ति तत्क्षणात्

अर्थ—हरताल और शङ्खके चूर्ण को खारे जलमें अर्थात् चूनेके पानी में मिला कर लोम पर इसका लेप करके घाममें खड़े हो जानेसे तुरन्त बाल गिर जाते हैं ॥ ४८ ॥

पूगपत्रोत्थनीरेण पिष्ट्वा गन्धकमुत्तमम् ।
तेनलिप्ता स्थिते घर्मे रोमखण्डन मुत्तमम् ॥ १६ ॥

अर्थ—सुपाड़ी के पत्ते के रस में उत्तम गन्धक [आम लासार गन्धक] पीस कर लोम पर लगावे घाममें बैठ जायतो तुरन्त बाल गिर जाय ॥ ४६ ॥

अथ योनिसंकोचन ।

निशाद्वयं पंकजकेशरं च,
निष्पीड्य देवद्रुमतुल्यभागम् ।
अनेन लिप्तं मदनातपत्रं,
प्रयाति संकोचमलं युवत्याः ॥ ५ ॥

अर्थ—दोनों हल्दी, कमल, केशर तथा देवदारु की लकड़ी

का समान भाग पीस कर भग पर लेप करने से स्त्रियोंकी भग संकुचित तथा निर्मल हो जाता है ॥ ५० ॥

संघातकी पुष्पफलत्रिकेत,
शम्बूत्वचा साररसं घृतेन ।
लिप्त्वा वरागं मधुके तुल्यं,
वृद्धापि कन्येव भवेत् पुमान्स्त्री ॥ ५१ ॥

अर्थ—धायका फूल, त्रिफला, जामुन की छाल, गद्दी और रस, घी तथा मुलहठी का समान भाग एक में मिला कर भग पर लेप करने से वृद्ध स्त्री की भग भी कन्याके भगके समान हो जाती है ॥ ५१ ॥

इन्दीवरव्याघ्रिवचोषणानां,
पुरङ्गमारासनयामिनीनाम् ।
लेपश्च नार्याः स्मररन्ध्रसंस्थो,
संकोचयत्याशु हठेन रन्ध्रम् ॥ ५२ ॥

अर्थ—नील कमल, कटेली, वच काली मिर्च कनैल, असन और हलदीके समान भागका स्त्रीका भग पर लेप करने से तुरन्त भग संकुचित हो जाती है ॥ ५२ ॥

या शक्रगोपं स्वयमेव पिष्ट्वा,
विलिम्पति स्त्री च वराङ्गदेशम् ।
आहत्य देशं कठिनं च गाढं
भवेन्न चात्रास्ति विचारचर्या ॥ ५३ ॥

अर्थ—जोस्त्री वीर वहू टीको पीस कर अपनी भगपर लेप करती है उसकी भग निस्सन्देह कठोर और गहिरी हो जाती है ॥ ५३ ॥

अथस्त्रीद्रावणम् ।

यद्यप्यष्टगुणाधिको निगदितः कामांगनानां सदा नो याति द्रवतां तथापि झटिति स्त्री कामिनां संगमे ॥ ५४ ॥ तस्माद्भेषजसंप्रयोगविधिना संक्षेपतो द्रावणं किंचित्पल्लवयामि नीरजदृशां प्रीत्य परं कामिनाम् ॥ ५५ ॥

अर्थ—यद्यपि पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियों में आठ गुणा काम कहा जाता है तथापि पुरुषों के संगमसे स्त्रियां शीघ्र ही स्खलित नहीं होतीं । अत एव संक्षेपमें कामिनी और कामियों में पर

स्पर प्रीति के निमित्त संक्षपमें स्त्रियों को स्खलित करनेवाली औषधि वर्णन करता हूँ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

सिन्दूरचिंचाफलमाक्षिकानि,
तुल्यानि यस्या मदनात् पत्रे ।
प्रलिप्य तस्याः पुरुषप्रसङ्गात्,
प्रागेव वीर्यच्युतिमातनोति ॥ ५६ ॥

अर्थ—जिस स्त्री की भग में सिन्दूर, इमली का फल और सहद्के समान भाग का लेप करके पुरुष. उससे प्रसंग अर्थात् मैथुन करता है स्त्रीका वीर्य पात शीघ्र हो जाता है ॥ ५६ ॥

त्र्योषं रजः क्षौद्रसमन्वितं वा,
क्षिप्तं यदि स्यात् स्मरयन्त्रगेहे ।
द्रुतं भवेत् सा सहसैव नारी,
दृष्टः सदायं किल योगराजः ॥ ५७ ॥

अर्थ—सहद्में त्रिफलेका चूर्ण मिला कर यदि स्त्रीकी भग में डाल दे और फिर उससे मैथुन करेतो वह शीघ्र स्खलित हो जाती है । यह योगराज सर्वदा सफलता देता हुआ देखा गया है ॥ ५७ ॥

पिप्पली चन्दनं चैव बृहती पक्वतिंतिडी ।
एषां लिङ्गे प्रलेपेन द्रवेन्नारी न संशयः ॥५८॥

अर्थ-पीपल, चन्दन, कटेहली और पकी इमली का लिंग पर लेप करके मैथुन करनेसे निस्सन्देह स्त्री स्खलित हो जाती है ॥ ५८ ॥

अगस्त्यपत्रद्रवसंयुतेन,
मध्वाज्यसंमिश्रितटंकणेन,
लिप्त्वा ध्वजं यो रमते ऽङ्गनानां,
स शुक्रमाकर्षति शीघ्रमेव ॥५९॥

अर्थ-जो अगस्त्यके पत्रके रस में घृत, सहद और सुहागा मिला कर और अपने लिंगके ऊपर इसका लेप करके स्त्री से मैथुन करता है वह उसके वीर्य को आकर्षित कर लेता है ॥५९॥

सलोध्रधत्तूरकपिप्पलीनां,
क्षुद्रोषणक्षौद्रविमिश्रितानाम् ।
लेपेन लिंगस्य करोति रेतः,
च्युतिं विपक्षप्रमदाजनस्य ६०

अर्थ—लोध, धतूरा, पीपल, कटेहली और विपरामूल के

चूर्ण को सहदमें मिला कर इसलेप को जो अपने लिंग पर लगा कर स्त्री से रति करता है वह स्त्रियोंके वीर्य को गिरा देता है ॥ ६० ॥

तुरंगसलिलमध्ये भावितं चेत्रमाषं,
मरिचमधुकतुल्यां विप्पलीं पेषयित्वा ।
परिरमति विलिप्य स्वीयलिंगं नरो यः,
प्रभवति वनितानां काककल्लोलमानः ॥६१॥

अर्थ—जो मनुष्य असगन्धके जलमें उरदी, मर्च, तथा मुलहठी का बराबर भाग पीस कर अपने लिंग पर इसलेपको लगाता है और फिर स्त्री से मैथुन करता है उससे स्त्री स्खलित हो जाती है ॥ ६१ ॥

विल्वपुष्पं सकर्पूरं मुण्डीपुष्पं च पेषितम् ।
लिंगलेपेन रामाणां द्रावो भवति संगमे ॥६२॥

अर्थ—वेल और मुण्डी का पुष्प तथा कपूर को एकत्र पीसकर लिंग पर इसका लेप करके स्त्री से मैथुन करने से स्त्री संगम करते ही स्खलित हो जाती है ॥ ६२ ॥

वृहतीफलमूलानि पिप्पली मरिचानि च ।

मधुरोचनया सार्द्धं लिंगलेपे द्रवान्विताः ।। ६३ ।।

अर्थ—शहदमें कटैलीका फल और जड़ पीपल, मिर्च तथा गोरोचन मिला कर लिंग पर इसका लेप करके स्त्रीसे मैथुन करनेसे स्त्री स्खलित होती ॥ ६३ ॥

मरिचकनकबीजैः पिप्पलीलोध्रवक्कै-
र्विमलमधुविमिश्रै मानवो लिप्तलिंगः ।
स्मरति रतिविलासे कष्टसाध्यां च नारीं,
समुचितरतिरागां संविदध्यादवश्यम् ।।६४।।

अर्थ—मिर्च धतूरेका बीज पीपल और लोधको कूट कर सहदके साथ लिंगपर इसका लेप करके मैथुन करने से जो स्त्री अधिक परिश्रम करने पर भी स्खलित नहीं होती वह भी विना परिश्रम अवश्य स्खलित हो जायँ ॥ ६४ ॥

सर्वेषां द्रवयोगानां मन्त्रराजं मयोदितम् ।
जपेदष्टोत्तरशतं तत्र योगस्य सिद्धये ।। ६५ ।।

अर्थ—इन सब द्रावणके उपायों का मेरा कहा हुआ एक मन्त्र है। इसका एकसौ आठ वार जप करनेसे यह सिद्ध हो जाता है ॥ ६५ ॥

मन्त्रः।

ॐ नमोभगवते रुद्राय उड्डामरेश्वराय स्त्रीणां मदं द्रावय द्रावय स्वाहा ठः ठः

इति उड्डीशतन्त्रे रावणेश्वरसम्वादे भाषाटीका सहितवशीकरणप्रयोगवर्णनं नाम सप्तः पटलः समाप्तः॥ ७॥

अथाऽष्टमः पटलः।

—:❀:❀:—
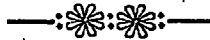
आकर्षणम्।

ईश्वर उवाच।

अथाग्रे कथयिष्यामि आकर्षणविधिं वरम्।
यस्यविज्ञानमात्रेण सत्यमाकर्षणं भवेत्॥ १॥
मानुषासुरदेवाश्च सयक्षोरगराक्षसाः।
स्थावराः जङ्गमाश्चैव आकृष्टास्ते न संशयः॥२॥

अर्थ—श्री शिवजी बोले कि अब आगे मैं आकर्षण की उत्तम विधि वर्णन करूँगा, जिसके जानने से मनुष्य, असुर, देवता, यक्ष, नाग, राक्षस तथा स्थावर जङ्गम आदि सबका आकर्षण निस्सन्देह हो जाता है ॥ १ ॥ २ ॥

गृहीत्वार्जुनवन्दाकमाश्लेषायां समाहितः ।
अजामूत्रेण सम्पिष्ट्वा निक्षिपेच्छिरसोपरि ॥३॥
नारी वा पुरुषो यस्य सुतो वा पशुरेव च ।
आकृष्टः स्वयमायाति सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥४॥

अर्थ—अश्लेषा नक्षत्रमें सावधानी से अर्जुन के वृक्ष का बांदा लाकर बकरेके मूत्र में उसको पीस डाले फिर जिस स्त्री पुरुष, तथा पुत्र और पशु आदिके शिर पर उसको डाले वह स्वयं आकर्षित हो कर चला आवे। मैं सत्य सत्य कहता हूँ कि यह प्रयोग मिथ्या नहीं होगा ॥ ३ ॥ ४ ॥

सूर्यावर्तस्य मूलं तु पञ्चम्यामानयेत् बुधः ।
ताम्बूलेन समं दद्यात् स्वयमायाति भक्षणात् ५

अर्थ—पञ्चमी के दिन सूर्यावर्त (हुर हुर) की जड़ ला कर उसको पानमें रख कर जिसको दे वह स्वयं आकर्षित होकर चला आवे ॥ ५ ॥

साध्यवामपदस्थां तां मृत्तिकामाहरेत्ततः।
कृकलासस्य रक्तेन प्रतिमाकारयेत्ततः॥ ६॥
साध्यनामाक्षरं तस्यास्तद्रक्तैर्विलिखेत् हृदि।
मूत्रस्थाने च निखनेत् सदा तत्रैव मूत्रयेत्।
आकर्षयेत्तु तां नारीं शतयोजनसंस्थिताम्॥७॥

अर्थ—जिस स्त्री का आकर्षण करना हो उसके बायें पैर के नीचे की मट्टी में गिरगिट का रक्त मिला कर उसकी मूर्ति बना ले फिर उस मूर्तिके हृदय में गिरगिट के रक्त से उसका नाम लिखे और मूत्र करने के स्थान में उसको गाड़ कर सर्वदा उसी पर मूत्र करने से एक सौ योजन (चार सौ कोस) तक की रहने वाली स्त्री आर्षित हो जाती है॥६॥७॥

इति श्री उड्डीशतन्त्रे रावणेश्वर सम्वादे आकर्षण प्रयोगवर्णनां नाम अष्टमः पटलः समाप्तः।

अथ नवमः पटलः ।

यक्षिणी साधनम् ।

ईश्वर उवाच ।

अथाग्रे कथयिष्यामि यक्षिण्यादिप्रसाधनम् ।
यस्य सिद्धौ नाराणां हि सर्वे सन्ति मनोरथाः १

अर्थ—श्री शिव जी बोले कि अब आगे यक्षिणी आदिका साधन वर्णन करूँगा, जिसके सिद्ध होने से मनुष्यों की सम्पूर्ण मनोकामना सिद्ध हो जाती है ॥ १ ॥

सर्वासां यक्षिणीनां तु ध्यानं कुर्यात् समाहितः
भगिनी मातृ पुत्री स्त्रीरूपन्तुल्यं यथेप्सितम् २

अर्थ—यक्षिणियों को माता, वहिन पुत्री और स्त्री के स्वरूप में अर्थात् जिस रूपमें उसको सिद्ध करना हो उसी रूपमें सावधानता से उसका ध्यान करना चाहिये ॥ २ ॥

भोज्यं निरामिषं चान्नं वर्ज्यं ताम्बूलभक्षणम् ।
उपविश्य जपादौ च प्रातः स्नात्वा न कं स्पृशेत् ३

नृत्यकृत्यं च कृत्वा तु स्थाने निर्जनके जपेत्।
यावत् प्रत्यक्षतां यान्ति यक्षिण्यो वाञ्छितप्रदाः ४

अर्थ—जब तक साधान करता रहे तब तक मांस और पान न खाना चाहिये तथा मृग छाला पर बैठना चाहिये। प्रातः काल में स्नान कर लेनेके उपरान्त किसी को स्पर्श न करे और अपनी नित्य क्रिया करके एकान्त स्थान में–जब तक वांछित फलको देने वाली यक्षिणी प्रत्यक्ष रूपमें प्रगट न हो तब तक—उसका जप करता रहे ॥ ३ ॥ ४ ॥

महायक्षिणी साधनम्।

मन्त्रः।

ॐ क्लीं ह्रीं ऐं ॐ श्री महायक्षिण्यै सर्वैश्वर्य प्रदात्र्यै नमः॥

इति मन्त्रस्य च जपं सहस्रस्य च सम्मितम्।
कुर्यात् विल्वसमारूढो मासमात्रमतन्द्रितः ॥५॥
मध्वामिषबलिं तत्र कल्पयेत् संस्कृतं पुरः।
नानारूपधरा यक्षो कश्चित् तत्रागमिष्यति ॥६॥
तां दृष्ट्वा न भयं कुर्याज्जपेत् संसक्तमानसः।

यस्मिन् दिने बलिं भुक्त्वा वरं दातुं समर्थयेत् ॥७॥
तदा वरान्वै वृणुयात्तांस्तान्वै मनसेप्सितान् ।
धनमानयितुं ब्रूयादथवा कर्णकार्तिकाम् ॥ ८ ॥
भोगार्थमथवा ब्रूयान्नृत्यं कर्तुमथापि वा ।
भूतानानयितुं वापि स्त्रियमानयितुं तथा ॥ ९ ॥
राजानं वा वशीकर्तुमायुर्विद्यां यशो बलम् ।
एतदन्यद्यदीप्सेत साधकस्तत्तु याचयेत् ॥१०॥
चेत्प्रसन्ना यक्षिणी स्यात् सर्वं दद्यान्न संशयः ।
अशक्तस्तु द्विजैः कुर्यात् प्रयोगं सुरपूजितम् ११
सहायानथवा गृह्य ब्राह्मणान्साधयेत् व्रतम् ।
तिस्रः कुमारिका भोज्याः परमान्नेन नित्यशः १२
सिद्धे धनादिके चैव सदा सत्कर्म आचरेत् ।
कुकर्मणि व्ययश्चेत् स्यात् सिद्धिर्गच्छति नान्यथा १३

अर्थ—बेलके वृक्ष पर बैठ कर जितेन्द्रिय हो एक मास तक प्रति दिन हजार इस मन्त्रका जप करै और यक्षिणी को बलिदान देने के लिये पहिले से वहां मदिरा और मांस

प्रस्तुत रक्खे क्योंकि बहुत सा स्वरूप धारण करने वाली यक्षिणी न जाने कब वहां आ जाय । जब वह आवे तो उसको देख कर भय न करे प्रत्युत सावधानी से मन्त्र का जप करता रहे । जिस दिन वह बलिदान लेकर वरदान देने को प्रस्तुत हो तब उससे जो इच्छा हो सो वर मांगले । धन लाने को कहे, कानमें बात बताने को कहे, भोग करने को कहे, नाचने को कहे, प्राणियों को लाने के लिये कहे, वस्त्र लानेको कहे, राजा को अपनेवशमें करदेने को कहे, आयु विद्या यश और बल आदि जो कुछ साधक चाहे वह सब कुछ उससे मांग सकता है । जब यक्षिणी प्रसन्न होती है तब निस्सन्देह सब कुछ देती । यदि स्वयं इस—देवताओं से पूजित—प्रयोग को सिद्ध करनेकी शक्ति न हो तो इसको ब्राह्मणोंसे करवावे अथवा उनकी सहायते करे । जबतक अनुष्ठान करता अथवा करवाता रहे तब तक प्रति दिन तीन हजार कुमारियोंको उत्तमोत्तम अन्नका भोजन करवाता रहै । जब धनकी सिद्धि प्राप्त हो जाय तो उस धन से सर्वदा सुकर्म करना चाहिये क्योंकि कुकर्म में धन व्यय करने से अवश्य सिद्धि जाती रहती है ॥ ५ । ६ । ७ । ८ । ९ । १० । ११ । १२ । १३ ॥

अश्वत्थवृक्षमारुह्य जपेदेकाग्रमानसः ।
धनदायीं यक्षिणीं च धनं प्राप्नोति मानवः १४

अर्थ—पीपलके वृक्षपर बैठकर एकाग्रचित्तसे जप करनेसे धनदा यक्षिणी से मनुष्यको मिलता है ॥ १४ ॥

मन्त्रः ।

॥ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं धनं धनं कुरु स्वाहा ॥

* सवयक्षिणियों के साधन करने। की विधि एकही है केवल उनके मन्त्रों में भेद है।

अयुतजपात्सिद्धिर्भवति ।

चूतवृक्षं समारुह्य जपेदेकाग्रमानसः ।
अपुत्रो लभते पुत्रं नान्यथा मम भाषितम् १५

अर्थ—आमके वृक्षपर बैठ कर एकाग्रचित्तसे जप करनेसे अपुत्र को पुत्र मिलता है। मेरा कथन मिथ्या न हीं है ॥ १५ ॥

मन्त्रः ।

॥ ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रूं कुरु कुरु स्वाहा

अयुतजपात् सिद्धिः ।

महालक्ष्मीसाधनम् ।

वटवृक्षे समारूढो जपेदेकाग्रमानसः ।
लक्ष्मी यक्षिणी च स्थिता लक्ष्मीश्च जायते॥१६॥

अर्थ—वटके वृक्षपर वैठकर एकाग्र चित से निम्नलित महा लक्ष्मी कामन्त्रका दशहजार जप कर करनेसे लक्ष्मी स्थायी हो जाती है॥ १६ ॥

॥ ह्रीं क्लीं महालक्ष्म्यै नमः ।

अयुतजपात्सिद्धिः ।

जयासाधनम् ।

अर्कमूलं समारूढो जपेदेकाग्रमानसः ।
यक्षिणीं च जयांनाम सर्वकार्यकरीं मताम् ।१७॥

अर्थ—मन्दार के वृक्ष पर जड़ पर वैठकर एकाग्रचित्तसे जया यक्षिणा के मन्त्रका दश हजार जप करनेसे से वह सब प्रकारके कार्य करता है ॥ १७ ॥

मन्त्रः ।

॥ ॐ ऐं जयायक्षिण्यै सर्वकार्यसाधनं कुरु कुरु स्वाहा ॥

विधिः—यह मन्त्र एक हजार जप करने से सिद्धहोता है।

ुस्तेन विधिना कार्यं प्रकाशं नैव कारयेत् ।
काशे वहुविघ्नानि जायते नात्र संशयः ॥१८॥

प्रयोगश्चानुभूतोऽयं तस्माद्यत्नमाचरेत् ।
निर्विघ्नेन विधानेन भवेत् सिद्धिरनुत्तमा ॥१६॥

अर्थ—इस प्रयोग को गुप्त रूपसे करना चाहिये। प्रगक करदेने से वहुत से विघ्न होने लगने हैं। यरु प्रयोग अनुभूत है इस कारण यत्नसे इसको करना चाहिये। निर्विघ्नता और विधि पूर्वक प्रयोग करनेसे उत्तम सिद्धि प्राप्त होती है ॥ १८। १६ ॥

अयुतजपात् सिद्धिः ।

इति दक्षिणीसाधनम् ।

अथ भूतिनीसाधनम् ।

सा भूतिनी कुण्डलधारिणी च
सिन्दूरिणी चाप्यथ हारिणी च ।
नटी तथा चातिनटी च चेटिका,
कामेश्वरी चापि कुमारिका च ॥ २० ॥

अर्थ—वह भूतिनी—कुण्डलधारिणि, हारिणी, नटी, अतिनटी, चेटोका, कामेश्वरी तथा, कुमारो कास्वरूप धारण करके अपनेसाधक की इच्छा पूर्ण करती है ॥ २० ॥

मन्त्र तथा विधिः ।

॥ ॐ ह्रौं क्रूं क्रूं कटु कटु अमुकी देवी वरदा सिद्धिदा च भव ॐ भः

चम्पावृक्षतले रात्रौ जपेदष्टसहस्रकम्।
पूजनं विधिना कृत्वा दद्यात् गुग्गुलधूपकम् २१
सप्तमेह्नि निशीथे च सा चागच्छति भूतिनी।
दद्यात् गन्धोदकेनार्घ्यं तुष्टा मातादिका भवेत् २२

अर्थ—रात्रिके समय चम्पाकेवृक्षके नीचे विधिपूर्वक भूतिनी का पूजन करके उसको गुगल का धूप दे और उपरोक्त मन्त्र का आठ हजार जपकरै। जप करनेके समय अमुक शब्दके स्थान में भूतिनी तथा कुण्डल धरिणी आदि जिसके सिद्धि की इच्छा हो उसका लेना चाहिये। इस प्रकार साधना करनेसे सातवी रात्रिको भूतिनी आती है। जब वह आवे तो सुगन्धित जल अर्थात् चन्दनके जलसे उसको अर्घ्य देना चाहिये। इस प्रकारसे जब वह सन्तुष्ट हो जाती है तब साधककी इच्छानुसार माता आदिस्वरूप से उसके सम्मुख प्रगट होती है॥२१।२१॥

मातेत्यष्टादशानां च वस्त्रालंकारभोजनम्।
भगिनी चेत्तदा नारीं दूरादाकृष्य सुन्दरीम्॥२३॥

रसं रसांजनं दिव्यं विधानं च प्रयच्छति ।
भार्या च पृष्ठमारोप्य स्वर्गं नयति कामिता ।
भोजनं कामिकं नित्यं साधकाय प्रयच्छति॥२४॥

अर्थ—माता होती है तो अठारह मनुष्योंको भोजन तथा वस्त्र आभूषण देती है, बहिन होती है तो दूर से सुन्दर सुन्दर स्त्री तथा नाना प्रकारकी दिव्यवस्तु और रसायन भोजन आदिका कर देती है और भार्या होती है तो साधकको अपनी पीठ पर बैठा कर स्वर्गमें ले जाती है और भोजन आदि देकर प्रति दिन उसको प्रसन्न रखती है। २३। २४॥

रात्रौ देवालयं दत्वा शुभां शय्यां प्रकल्पयेत् ।
जातिपुष्पेण वस्त्रेण चन्दनेन च पूजयेत् ॥२५॥
धूपं च गुग्गुलं दत्वा जपेदष्टसहस्रकम् ।
जपान्ते शीघ्रमायाति चुम्बत्यालिंगयत्यपि ॥२६॥
सर्वालंकारसंयुक्ते संभोगादिसमन्विता ।
कुबेरस्य गृहादेव द्रव्यमाकृष्य यच्छति ॥ २७ ॥

इति भूतिनीसाधनम् ।

अर्थ—रात्रिके समय देवालयमें जाकर एक सुन्दर शय्या सुसज्जित करे फिर चमेली के फूल, यक्षतथा चन्दन से पूजाकरके गुगुलकी धूपदेवे और उपरोक्त मन्त्रका आठ हजार जप करे। जप समाप्त होने पर देवी आती है और साधनका आलिंगन चुम्बन करती है फिर सम्पूर्ण अलंकार से अलङ्कृत होकर साधकसे भोगकरती है और प्रातःकालमें प्रतिदिन कुवेर के गृहसे धन लाकर दे जाती है ॥ २५ । २६ । २७ ॥

इति भूतिनी सधनम् ।

अथ शवश्मशानसाधनम् ।

ईश्वर उवाच ।

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि शवसाधनमुत्तमम्
श्मशानसाधनं चापि तदाश्चर्यकरं परं
यस्य विज्ञानमात्रेण सिद्धो भवति साधकः॥२८॥

अर्थ—श्री शिवजी बोले कि अब मैं शवसाधन-जिसको श्मशानसाधन भी कहा जाता है-उसकी उत्तम विधि वर्णन करूंगा जिसको जानलेनें से साधन करनेवाले सिद्ध हो जाता ॥ २८ ॥

श्मशानान्तयमागत्य उपवासो जितेन्द्रियः ।
अमायां भौमवारे च शवोपरि समारुहेत् ॥२९॥
अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं मौनी निर्भयरूपतः ।
शवसाधनमेतत्तु सिद्ध्यत्यत्र न संशयः ॥३०॥
यद्यदाज्ञापयति तत् कुरुते सुविनिश्चितम् ।
जपान्ते पूजनं कार्यं श्मशाने निर्जने तथा ।
षोडशैरुपचारैस्तु श्यामां श्यामलसुन्दरीम् ॥३१॥

मन्त्रः ।

ॐ ह्रीं श्रीं शवमेनं साधय साधय स्वाहा ॥

अर्थ—जिस मंगलवार के दिन अमावस्या हो उस दिन साधना करनेवाले जितेन्द्रिय पुरुष को श्मशानमे मुर्देके ऊपर वैठकर निर्भयतासे चुपचाप उपरोक्त मन्त्रका दश हजार जप करना चाहिये । शव साधन करनेकी यही क्रिया है। इसकी साधन कर के साधक जनोंको जो आज्ञा देती हैं उसको वे अवश्य करते हैं। जप समाप्त होने पर निर्जन स्थानमें अथवा श्मशान में सोल हो प्रकारसे श्यामा और श्यामल सुन्दरी की पूजा करनी चाहिये ॥ २९ । ३० । ३१ ॥

अथ पादुकासाधनम्।

काकजंघा सिता ग्राह्या गृध्रस्य च वसा तथा।
अश्वगन्धा समायुक्ता हयुष्ट्रक्षीरे च पेषयेत्।
अनेन लिप्तपाद तु योजनानां तिथिं व्रजेत्॥३२॥

अर्थ—ऊंटिन के दूधमें सफेद काक जंघा, गृद्धकी चर्वी और असगन्ध मिला कर पैरके तलवेमें इसका लेप करने से मनुष्य एक दिन पन्द्रह योजन तक चला जा सकता है॥ ३२॥

मन्त्रः।

॥ ॐ नमो भगवते रुद्राय भतवेतालत्राशनाय शंखचक्रगदां धारय हन हन महते चन्द्रायुताय हुं फट् स्वाहा॥

लक्षजपात् सिद्धिर्भवति। अनेन सप्तवारमभिमन्त्रयित्वा प्रलेपयेत्।

विधिः—इस मन्त्रका एकलाख जप करनेसे सिद्धि होती है। उपरोक्त लेपको इस मन्त्रसे सात वार अभिमन्त्रित करके लगाना चाहिये।

श्वानं मार्जारनकुलं पित्तं ग्राहय्यं समं समम्।
योजनानां तिथिं गत्वा काकमांसं रसांजनम् ।
पिष्ट्वा पादप्रलेपेन पुनरावर्तते तथा ॥ ३३ ॥

अर्थ--कुत्ता बिल्ली और नेवलेकी पित्तका समान भाग एकमें मिलाकर लेपकर लेतो एक दिनमें पन्द्रह योजन तक मनुष्य जा सकता हैं । फिर कउएका मांस और रसांजन मिलाकर लेपकर लेनेसे उसी दिन उतनी ही दूर पैरसे लौट भी सकता है ॥ ३३ ॥

मन्त्रः ।

ॐ नमो भगवते रुद्राय मांसे संमले काले ख ले घोर प्रवर सरसर स्वाहा ॥

विधिः--मन्त्र कोभी सिद्धि करनेकी विधि ऊपर लिखे हुए मन्त्र के समान है ।

काकस्य हृदयं नेत्रं जिह्वाचैव मनःशिलाम् ।
सिन्दूरं गौरिकं चैव अजमारीं च मालतीं ॥ ३४ ॥
समांरुद्रजटाचैव विदायां सहपेषयेत् ।

तत्लिप्तपादसहसा योजनानां शतं व्रजेत्
वली पलितनिर्मुक्तो दययाभूतसंप्लवम् ॥ ३४ ॥

मन्त्रः ।

॥ ॐ नमो भगवते रुद्राय हरित गदेश्वराय।
त्राशय त्राशय चालय चालय स्वाहा ॥

अर्थ—कौवा का हृदय, नेत्र जिह्वा, मनशील, सिन्दूर, गुरु अजवाइन, मालती, और बिलारी कन्दका बराबर बराबर मिलाकर इसका लेप बना लेवे । इस लेप को पैरमे लागानेसे मनुष्य एक सो योजन तक जा सकता है इस लेप को भी उपरोक्त मन्त्रसे सातबार अभिमंत्रित कर लेनाचाहिये ॥ ३३ । ३४ ॥

ईश्वर उवाच ।

मृतसंजीवनीं विद्यां कथयिष्यामि प्रेमतः
लिंगमंकोलवृक्षाधः स्थापयित्वा प्रपूजयेत् ॥ ३५॥
जवं घटं च तत्रैव पूजयेल्लिगसन्निधौ ।
वृक्षं लिंगं घटं चैव सूत्रेणैकेन वेष्टयेत् ॥३६॥

अर्थ—श्री शिवजी बोले की अब मैं प्रेमपूर्वकमृतसंजीवनी विद्या वर्णन करूँगा । अँकोल वृक्षके नीचे शिव लिङ्ग

और उसीके समीप में एक नया घट स्थापित कर के वृक्ष लिङ्ग तथा घटको एकही सूत्रमें बाँध कर लिङ्ग और घट दोनो की पूजा करे ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

चतुर्भिः साधकैर्नित्यं प्रणिपत्य क्रमेण तु ।
एवं द्विदिनं कुर्यादघोरेण समर्चयेत् ॥ ३७ ॥
पुष्पादिफलपाकान्तं साधनं कारयेत् बुधः ।
फलानि पक्कान्यादाय पूर्वोक्तं पूरयेद् घटम् ॥ ३८ ॥

अर्थ—और प्रति दिन चार साधकों के सहित-एक एक करके शिवजी को प्रणाम करै । फिर इसी प्रकार अघोर मन्त्र से जब तक उस वृक्षमें फूल फल लगे तब तक एक एक साधक को दो दो दिन उस लिङ्ग की पूजा करते रहना चाहिये । जब फल पक जाय तब उसे उपरोक्त घटमें भर देवे ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

तद् घटं पूजयेन्नित्यं गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ।
तुषवर्जन्ततः कुर्याद्बीजानां घर्षयेन्मुखम् ॥३९॥
तन्मुखे वृन्हणं वृत्तं किंचित् किञ्चित् प्रलेपयेत् ।
विस्तीर्णमुखभागान्तः कुम्भकारकरोद्भवाम् ॥४०॥

अर्थ—और नित्य गन्ध पुष्प तथा अक्षत आदिसे उसकी

पूजा करै फिर उस घटमें से उन बीजोंको निकाल कर उनकी भूसी अलग कर देये और कुह्मार के यहाँसे बड़े मुखका घट लाकर उसके मुखके भीतर थोड़ा सा सोहागा का लेप कर दे ॥ ३९ ॥ ४० ॥

मृत्तिकां लेपयेत्तत्र तानि बीजानि रोपयेत् ।
कुण्डल्याकारयोगेन यत्नात् उर्ध्वं मुखानि वै॥४१॥
शुष्कं तं ताम्रपात्रोर्द्ध्वं भाण्डं देयमथो मुखम् ।
आतपे धारयेत्तैलं ग्राहयेत्तं च रक्षयेत् ॥ ४२ ॥
मासार्द्धं चैव तत्तैलं मासार्द्धं तिलतैलकम् ।
नस्यन्देयं मृतस्यैव कालदष्टस्य तत्क्षणात्॥४३॥

अर्थ–फिर उसमें मिट्टी रख करके कुण्डली के अकार से उक्त बीजो को बोदे अर्थात् गाड़दे । इस प्रकार जब वे बीज शुष्क हो जायँ तब उस घटके ऊपर तामे का पात्र रख कर उसका मुख उलट दे और उसके ऊपर से आँच देकर उस बीज का तेल निकाल ले । आधा मासा यह तेल और आधा मासा तिलोंका तेल एकमें मिला कर कालरूपी सर्पके काटे हुए प्राणी को इसका नस देने से प्राणी तुरन्त जीवित हो जाता है ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

मन्त्रः ।

ॐ अघोरेभ्योथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यश्च ।
सर्वतः सर्वसर्वेभ्यो नमस्ते रुद्ररूपेभ्यः ॥

अथ विद्याधरसिद्धिः ।

मायाबीजं तथा गौगोपतये तदनन्तरम् ।
एतन्मन्त्रं शुचिर्भूत्वा निशीथे तु जपेत् सुधीः॥ ४४॥
त्रिसहस्रं जपेन्नित्यं ततः सिद्धर्भवेत् ध्रुवम् ।
गन्धर्वशब्दविद्भूत्वा बलवान् पुत्रवान् भवेत् ॥४५॥

इति श्री उड्डीशतन्त्रे रावणेश्वरसम्वादे यक्षिणी साधनवर्णनं नाम नवमः पटलः समाप्तः ॥ ९ ॥

अर्थ—"ॐ" ह्रीं गौगोपतयेनमः इस मन्त्र का आधीरात के समय प्रति दिन तीन हजार जप करने से मन्त्र अवश्य सिद्ध होता है । विद्याधर की सिद्ध हो जानेसे मनुष्य गन्धर्व का शब्द जानने लगता है और बलवान् तथा पुत्रवान् तथा पुत्रवान् हो जाता है ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

इति श्री उड्डीशतन्त्रे रावणेश्वरसम्वादे भाषाटीकायां विद्याधरसिद्धिवर्णनंनाम नवमः पटलः समाप्तः ॥ ९ ॥

—:*:—

अथ दशमः पटलः।

—❀—
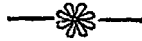
इन्द्रजालकौतुकम्।

ईश्वर उवाच।

इन्द्रजालं प्रवक्ष्यामि शृणु सिद्धिं प्रयत्नतः।
येन विज्ञातमात्रेण ज्ञायते सर्वकौतुकम् ॥ १ ॥

अर्थ—श्री शिवजी बोले कि अब मैं इन्द्र जालिक कौतुक करने को सिद्धि होने का वर्णन करूँगा; जिसके जानने से सब प्रकार के कौतुकों का ज्ञान हो जाता है। तुम सावधानी से सुनो ॥ १ ॥

अथ भूतकारणम्।

आदौ भूतकरं वक्ष्ये तच्छृणुष्व समासतः।
भल्लातकरसे गुंजा विषं चित्रकमेव च ॥ २ ॥
कपिकच्छुकरोमाणि चूर्णं कृत्वा प्रयत्नतः।
एतच्चूर्णप्रदानेन भूतीकरणमुत्तमम् ॥ ३ ॥

अर्थ—पहिले संक्षेप में भूत करने का प्रयोग वर्णन करूँगा

इसको सावधानी से सुनो । भिलोय के रसमें घुंघुंची, विष, चिता और केवांच का चूर्ण मिला कर जिसको देदे उसको भूत लग जाय ॥ २ ॥ ३ ॥

तस्य रूपं प्रवक्ष्यामि ज्ञायते यैस्तु लक्षणैः ।
अङ्गानि छिंछिमायन्ति मूर्छन्ति च मुहुर्मुहुः ।
एतद्रूपं भवेद्यस्य तत् भूतावेशलक्षणम् ॥ ४ ॥

अर्थ–जिन लक्षणों से भूता वेश जाना जाता है वह लक्षण वर्णन करता हूँ । शरीर धीरे धीरे हिलने लगे, बारम्बार मूर्छा आवे ये लक्षण जिस में दिखाई दें उसको भूतावेश जानना चाहिये ॥ ४ ॥

चिकित्सा तस्य वक्ष्यामि येन सम्पद्यते सुखम् ।
उशीरं चन्दनं कुष्ठं लेपो भूतविनाशकः ॥५॥

अर्थ—अब जिसको भूतावेश हुआ हो उसकी औषधि वर्णन करता हूँ । खस, चन्दन, कांगनी, तगर, लाल चन्दन और कूट एकमें मिला कर लेप करने से भूतावेश नाश हो जाता है ॥ ५ ॥

मन्त्रः ।

ॐ नमो भगवते उड्डामेश्वराय कुहुनी

कुर्वन्तो स्वाहा ॥

शताभिमन्त्रितं कृत्वा ततः सुस्थो भविष्यति ।

विधि—उपरोक्त मन्त्रसे एकसौ वार भूतावेशवाले को झाड़ देनेंसे वह स्वस्थ हो जाता है ।

अथ ज्वरनिवारणम् ।

श्रीवेष्टकं घृतं हिंगु देवदारु गवाक्षि च ।
गोदन्ती सर्षपाः केशाः कटुकी निम्बपल्लवाः ६
द्वे बृहत्यौ वचा चव्यां कर्पासास्थिरुपायवाः ।
छागरोमाणि मायूरं पिच्छमेकत्र मेलयेत् ॥७॥

अर्थ—लोहवान, घृत, हींग, देवदारु, गवाक्षी (इन्द्रवारुणी) गोदन्ती, सरसो, केश, कुटकी नीमका पत्ता दोनों प्रकार का कटाई, वच चव्य बिनौला सूखा हुआ जव, वकरेका लोम और मोर को पूछ ॥ ६ ॥ ७ ॥

सुपिष्टोऽजसमूत्रेण मृद्भाण्डे धारयेत् बुधः ।
एष माहेश्वरो धूपो धूपितोन्मत्तरोगिणौ ॥ ८ ॥
अङ्गरक्षा पिशाचाद्याः पन्नगाः भूतपूतनाः ।
शाकिन्यै काहिक द्वित्रिज्वराश्चातुर्थिकान्तकाः ।

नश्यन्ति क्षणमात्रेण ये चान्येविघ्नकारिणः ॥९॥

अर्थ—वच्छाके मूत्रमें पीस कर मिट्टीके पात्र इस धूपका धूप देने से ग्रह, पिशाच, भाग, भूत, पूतना, शाकिनी, एकाहिक, द्वाहिक त्र्याहिक और चातुर्थिक ज्वर तथा अन्य प्रकार के दुःखदायी रोग तुरन्त शान्त हो जाते हैं ॥ ८ ॥ ९ ॥

गुग्गुलं लशुनं सर्पिः कंचुकपिरोम च ।
शिखि कुक्कुट्योर्विष्ठा मलः पारावतस्य च॥१०॥
एतत् धूपात् ग्रहाः क्रूराः पिशाचाभूतपूतनाः ।
डाकिन्यैहि ज्वरा रौद्रा नश्यन्ति स्पर्शमात्रतः ११

अर्थ—गुग्गुल, लहसुन, घृत, सांपकी केंचुर, वानरका रोम और मुर्गा और कबूतर की विष्ठा एकमें मिलाकर इसका धूप देने से क्रूर ग्रह, पिशाच, भूत, पूतना डाकिनी और बड़े बड़े वीर तुरन्त उतरजाते हैं ॥ १० । ११ ॥

अंजनं राजिका कृष्णा मरीचैर्भूतनाशनम् ।
नागरं वकुची निम्बं एतद्वा रौद्रभंजनम् ॥१२॥

अर्थ—काली राई और काली मिर्च को एक में मिलाकर अंजन करनेसे भूत उतर जाता है । नागर वकची और निम्ब

को पकमें मिलाकर अंजन करनेसे ज्वर की भयानक पीड़ा शान्त होती है ॥ १२ ॥

सहिंगु वारिणा पीता भूकदम्बस्य मूलिका,
शाकिनी ग्रह भूताना निग्रहं कुरुते ध्रुवम् ॥१३॥

अर्थ—गोरखमुण्डी का जड़ रख कर ऊपर से हींगका जस्त पीने से शाकिनी ग्रह आदिको शान्ति होती है ।

विशालायाः फलं पक्वं हितं गोमूत्रनस्यतः ।
ब्रह्मराक्षस भूतानां पद्मं वा मरिचान्वितम् ॥१४॥

अर्थ—गौके मूत्रमें विशाला [इन्द्रवारुणा) का पका हुआ फल मलाकर अथवा कमल गट्टा और मिर्चको पकमें मिला कर नास लेलेन से ब्रह्मराक्षस और भूत कानाश हो जाता ॥१४ ॥

पुष्पे कुष्माण्डतोयेन निशां सम्पिष्टनिर्मिताम् ।
गुटिकाञ्जनमात्रेण भूतग्रहविनाशिनी ॥१५॥

अर्थ—कोंहड़े के फूलके रसमें हल्दी मिला कर गोली वन्त बोले इस का अंजन करनेसे भूतग्रहका नाश होता है ॥१५॥

मन्त्रः ।

ॐ नमोभवते रुद्रायनमः । कोशेश्वरायनमो ज्योतिः पतंगाय नमो नमः । सिद्धिरूपो रुद्राय

ह्मापति स्वाहा ॥

सप्तवारं जप्त्वा हृढग्राहो विमुंचति ।

विधिः—उपरोक्त मन्त्रका सात वार जप करनेसे कठिन से कठिन ग्रहोंसे मनुष्य मुक्त हो जाता है।

सद्योजातं तथा घोरो रुद्रो मनसि संस्थित् ।
ज्वरं निहन्ति जन्तूनामशेषं सिद्धवन्दित॥१६॥

अर्थ—सिद्धों से वन्दित इस "सद्योजात" आदि शिवजी के अघोर मन्त्र का हृदय में ध्यान करने से प्राणियों का ज्वर छूट जाता है ॥ १६ ॥

प्रयुक्ता सोंततो विद्या लिखिता वटपल्लवे ।
पावकेन ज्वरं घोरं हन्ति तस्यावलोकनात् १७

अर्थ—वटवृक्षके पत्ते पर कोयले से इस मन्त्र को लिखकर जिसको ज्वर आयाहो उसको देनेसे ज्वर नाश हो जाता है ॥ १७ ॥

लिखित्वा दक्षिणे बाहौ बन्ध्या नित्यज्वरापहाम् ।
अष्टोत्तरशतं जप्त्वा मन्त्रं त्रैमासिकज्वरे ।
ज्वरग्रस्ताय तं दद्यादाचार्यो ज्वरशान्तये ॥१८॥

अनेन ज्वरमावेशयति

इस मन्त्रसे ज्वर का आवेशय होता है।

ॐ नमो भगवते रुद्राय छिन्धि छिन्धि ज्वरस्य ज्वरो ज्ज्वलितकरालपाणये हुं फट् स्वाहा ॥

इससे मन्त्रसे ज्वर रूप जाता है।

ॐ नमो भगवते रुद्राय भूताधिपतये हुं फट् स्वाहा ॥

इस मन्त्रसे सब प्रकार का ज्वर नाश हो जाता है।

अथ उन्मत्तकरणम्।

जलं कनकबीजानि धूर्तचूर्णसमन्ततः।
गृहेचेटकविष्ठांतु तथा बीजकरंजकम् ॥ १६ ॥
तदुन्मत्तकचूर्णं तु भक्षणात् तत्क्षणात् व्रजेत्।
एकविंशतिवारानभिमन्त्र्य च प्रयत्नतः ॥ २० ॥
खाने पाने प्रदातव्यं दत्तोन्मत्तो भविष्यति।

अर्थ—इस मन्त्र को उपरोक्त विधिसे लिख कर दहिने हाथ की भुजा पर बाँधने से दैनिक ज्वर नाश हो जाता है।

ऐपाह्निक ज्वरमें आचार्य को १० ८ वार इस मन्त्र का जप करके रोगिका ज्वर शान्त करना चाहिये ॥ १८ ॥

मन्त्रः ।

ॐ नमो भगवते रुद्राय शूलपाणये पिशाचाधिपतये आवेशय आवेशय कृष्णपिङ्गलाय फट् स्वाहा ॥

घृतगुग्गुलधूपेन सुस्थो भवति नान्यथा २१.

अर्थ—धतूरेका बीज, लौहकीट गागौहाकी विष्ठा और कं आ के बीजके समान भागका चूर्ण बनाकर जलके साथ खाने से मनुष्य तुरन्त उन्मत्त हो जाता है और निम्न लिखित मन्त्रसे एकईस वार अभिमन्त्रित करके जल पिला देने से भी उसी समय उन्माद हो। जाता हैं। और घृत गुगुल के धूप से फिर उन्माद शान्त हो जाता है ॥ २६ ॥ २० ॥

मन्त्रः ।

ओं नमो भगवति गृही गृही वाराही सुभगे ठः ठः ॥

अथ विस्फोटककरणम् ।

अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि योगं परमदुर्लभम् ।

शत्रूणामपकारार्थं यथा मम प्रकाशितम् ॥२२॥
येन योजितमात्रेण शत्रुदेहे समन्ततः ।
विस्फोटकाश्च जायन्ते घोराः शत्रुविनाशकाः॥२३॥

अर्थ–श्री शिवजी फिर बोले कि अब मैं शत्रुओं के अपकार अर्थात् कष्ट देने के लिये अति दुर्लभ योग को विधि पूर्वक वर्णन करता हूँ। जिसका प्रयोग करने से शत्रु के समस्त शरीर में विस्फोटक अर्थात् फोड़ा फुन्सी हो जाता है और वह उस की घोर पीड़ा से पीड़ित होकर मर जाता है २२ ॥ २३ ॥

कीटकं भ्रमरं चापि कृष्णं वृश्चिकमेव च
मूषकस्य शिरो ग्राह्यं मर्कटस्य तथैव च ॥२४॥
कृत्वैकत्र समानानि पाषाणे च विचूर्णयेत्
यमदण्डसमं चूर्णं दुर्निवारं सुरैरपि ॥ २५ ॥

अर्थ–सांप, भौरा, काली विच्छी मूस तथा वानर के मस्तक का समान भाग एकत्रित करके चूर्ण बना लेवे। यह चूर्ण बना यमराज के दण्ड के समान है इसका निवारण देवता ओं से भी नहीं हो सकता ॥ २४ ॥ २५ ॥

योजयेच्छत्रुसंघाते वस्त्रे शय्यासु यत्नतः

विस्फोटाः सर्वगात्रेषु जायन्तेऽतिभयावहाः
पीडया सप्तरात्रेण म्रियते नात्र संशयः ॥२६॥

अर्थ-फिर शत्रु का संघार करने के लिये उसके वस्त्र और शय्या पर डाल देने से शत्रु के शरीर में सर्वत्र अति भयानक विस्फोटक उत्पन्न हो जाता है और उस की पीड़ा से पीड़ित हो कर सात रात्रि में शत्रु मर जाता है ॥ २६ ॥

नीलोत्पलं सकुमुदं तथा वै रक्तचन्दनमम् ।
कुक्कुरीदंतसंयुक्तं पेषयित्वा प्रयत्नतः
तदा लेपेन मात्रेण सद्यः सम्पद्यते सुखम् ॥२७॥

अर्थ—और जब उसको आरोग करना हो तब मुर्गी के पित्तमें नील और लाल कमल तथा लाल चन्दन मिला कर उसकी शरीर पर लेप कर देने से वह अवश्य सुखी हो जायगा ॥ २६ ॥

अथ कुष्ठीकरणम् ।

अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि कुष्ठीकरणमुत्तमम् ।
येनयोजितमात्रेण कुष्ठी भवति नान्यथा॥ २७॥

अर्थ—श्री शिवजी बोले कि अब कोढी करने को उत्तम

विधान वर्णन करता हूं जिसके करनेसे निःसन्देह कोढ हो जाता है ॥ २७ ॥

भल्लातकरसं गुंजा तथा वै मुण्डुकादिका ।
गृहगोधी समायुक्ता खाने पाने च दापयेत् ।
सप्ताहात् जायते कुष्ठं तीव्रपीड़ा समान्वितम् ॥२८॥

अर्थ—भेलामेके रस, घुंघची तथा मेढक आदि को एकत्र मिलाकर खाने अथवा पीनेको वस्तुमें मिलाकर दे देनेसे एक सप्ताहमें घोर पीड़ा के सहित कुष्ठ उत्पन्न हो ॥ २८ ॥

एतस्य प्रशमं वक्ष्ये यथा मम प्रकाशितम् ।
धात्रीखदिर निम्बानि शर्करासहितानि च ॥२९॥
विचूर्ण्य मधुसर्पिभ्यां जीर्णान्नेन प्रदापयेत् ।
शालिभक्तं पटोलं च तथा शीघ्रं विपाचितम् ।
एतेन दत्तमात्रेण नरः सम्पद्यते सुखी ॥ ३० ॥

अर्थ—अब इसके शान्त होने का उपाय वर्णन करता हूं । आँवला, खैर और नीम का चूर्ण बना कर उसमें शक्कर घृत और सहद मिलावे फिर पुराने चावल के साथ एकमें पीस कर खिला दे और परोरा की तरकारी पुराने चावल का

भात तथा भोजन पथ्यमें देनेसे मनुष्य सुखी हो जाता है ॥ २९ ॥ ३० ॥

—:*:—

अथ मक्षिकानिवारणम् ।

तकपिष्ठेन तालेन लेपयेत् पुत्रिकाकृतम् ।
तामादाय गृहाद्याति मक्षिका नात्र संशयः ॥३१॥

अर्थ-एकपुतली के ऊपर जएठेमें हरताल पीस कर लेप करके रख देने तो उसको सूँघ कर मक्खी घरमें नहीं आतीं और भाग जाती हैं ॥ ३१ ॥

अथ मूषकनिवारणम् ।

श्वेतार्कदुग्धं कुलथ्याश्च तिलचूर्णं तथैव च ।
अर्कपत्रेतु न्यस्तानि मूषकान्तकराणि वै ॥३२॥

अर्थ-तिल और कुलथीं का चूर्ण सफेद आकके दूधमें मिला कर आकके पत्ते पर रख देनेसे चूहोंका नाश हो जाता है ॥ ३२ ॥

तालकं छागविण्मूत्रं सपलांडुं च पेषयेत्

आलिप्य मूषकं तेन जीवितं च विसर्जयेत् ।
तं दृष्ट्वाथ गृहं त्यक्त्वा पलायन्ते हि कौतुकम् ॥३३॥

अर्थ—बकरी के मूत्रमें बकरी की लेंड़ी और हरताल पीस कर एक चूहे के ऊपर इसका लेप कर के उसे जीवित ही छोड़ देनेसे उसको देख कर दूसरे चूहे भी भाग जाते है ॥ ३३ ॥

मार्जारस्य मलं ताल पिष्ट्वा मूषिकमालिपेत् ।
तमाघ्राय गृहं त्यक्त्वा सद्यो निर्यान्ति मूषकाः३४

अर्थ–इसी प्रकार बिलार की विष्ठा और हरताल एक में पीस कर चूहे के ऊपर लेप कर देनेसे उस चूहेको सूँघ कर दूसरे चूहे घर छोड़ कर भाग जाते हैं ॥ ३४ ॥

अथ मत्कुणनिवारणम् ।

अर्कतूलमयी वर्तीभावयेत्लाक्षकेन च ।
दीपं तत्कटुतैलेन निःशेषा यांति मत्कुणाः॥३५॥

अर्थ–आँकके रूई की बत्ती को महावर में रङ्ग कर कड़ुए तेलके दीपक में जलाने से खटमल भाग जाते हैं ॥ ३५ ॥

अर्जुनस्य गलं पुष्पं लाक्षा श्रीवासगुग्गुलम् ।

श्वेतापराजितामूलं भल्लातकविडंगकम् ॥३६॥
धूपः सर्जरसोपेतः प्रदेयो गृहमध्यतः ।
सर्पाश्च मत्कुणा मूषा गन्धाद्यान्ति दिशो दश ३७

अर्थ-अर्जुन का फल, लाल और सफेद चन्दन, सफेद अपराजिता की जड़ भिलामा, वायविडंग और रालके समान भाग से घरमें धूप देनेसे इसकी गन्धसे साफ खट मल तथा चूहे घर त्याग कर चारो ओरजाते भागजाते हैं ॥ ६२ ॥ ३७॥

—:॰:—

अथ सर्पादिनिवारणम् ।

गुडश्रीवासभल्लात् विडंग त्रिफलायुतम् ।
लाक्षार्कपुष्पयुक्तश्च धूपो वृश्चिकसर्पहृत् ॥३८॥

अर्थ- गुड़ शफेद चन्दन वायविडङ्ग त्रिफला, लाहका रस और आँक का फूल एक में मिला कर धूप देनेसे साँफ और बिच्छू घरमें से भाग जाते हैं ॥ ३८ ॥

मुस्तासिद्धार्थभल्लातकपिकच्छूफलं गुडः ।
चूर्णं भानुफलोपेतं लिहेत्सर्जरसैः समम् ॥३६॥

मत्कुणा मशकास्सर्पाः मूषका विषकेटकाः ।
पलायन्ते गृहं त्यक्त्वा यथा युद्धेषु कातराः ॥४०॥

अर्थ-मोथा, सरसो भिलामा केवांच का फल गुड़ तथा आँक [मन्दार] के फल का समान भाग एकमें मिला कर धूप देनेसे खटमल, मच्छर सर्प, चूहे तथा विषके कीड़े घर छोड़ कर ऐसे भाग जाते हैं जैसे युद्धसे कायर भाग जाते हैं ॥ ४० ॥

अथ मशकनिवारणम् ।

भल्लातकविडंगानि विश्वकंपुष्करं तथा ।
जम्बु लोमशकं हन्ति धूपाढ्या गृहमध्यतः ॥४१॥

अर्थ—भिलांमा, वायविडङ्ग, सोंठ, पोहकर मूल और जामुन के समान भाग का धूप देनेसे मच्छर भाग जाते हैं ॥ ४१ ॥

अथ क्षेत्रोपद्रवनाशनम् ।

अथ क्षेत्रस्य सस्यानां सर्वोपद्रवनाशनम् ।
बालूका श्वेत सिद्धार्थान् प्रक्षिपेत् क्षेत्र मध्यतः॥४२॥

सलभाः सर्पकीटाश्च वरहा मृगमूषकाः
मशकास्तत्र नो यान्ति मन्त्र विद्या प्रभावतः॥४३॥

अर्थ-अब खेतमें के अन्न पर होने वाले सब प्रकार के उपद्रवों को नाश करने का उपाय वर्णन किया जाता है। बालू और सफेद सरसों एकमें मिला कर खेतमें डाल देने से टीडी, सर्प कीड़े, सुअर, हिरण, चूहे तथा मच्छर आदि मन्त्र विद्या के प्रभाव से उस खेतमें नहीं आते ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

पूर्वाषाढाख्य ऋक्षे तु वन्दाम्बिभीत वृक्षजाम् ।
सस्य मध्ये क्षिपेत्तेन सस्यवृद्धिभवेद्ध्रुवम् ॥४४॥

अर्थ-पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रमें बहेड़े का बांदा लाकर खेतमें डाल देनेसे अन्न की वृद्धि होती है ॥ ४४ ॥

मन्त्रः ।

ॐ नमः सुरेभ्यः बलजः उपारि परिमिलि स्वाहा

इत्यनेनायुत जपात् सिद्धिः ।

इस मन्त्रका दश हजार जप करने से सिद्ध होता है ।

—❀—

अथ रक्तनिवारणम्।

शैलुचत्वचा मिश्रिततन्दुलानां,
विधाय पिष्टं विनियोजनीयम्
कन्दर्पगेहे मृगलोचनायां,
रक्तं निहन्त्याशु हठेन योगः ॥ ४५ ॥

अर्थ—लहसोड़े की छाल और साठी चावल की पोटरी बांध कर स्त्री की भगमें रख देनेसे रक्त बन्द हो जाता है ॥ ४५ ॥

धात्री च पथ्या च रसांजनं च,
कृत्वा विचूर्णं सजलं निपीतम्
अत्यन्तरक्तोत्थितमुग्रवेगं,
निवारयेत्सेतुमिवाम्बुपूरम् ॥ ४६ ॥

अर्थ-आंवला, हर्डा और निसोत का चूर्ण जल के साथ पीनेसे अत्यन्त वेगसे आता हुआ स्त्रियों का रक्त रुक जाता है ॥ ४६ ॥

मूलं तु शरपुंखाया पेषयेत्तन्दुलोदकैः।
पीवेत्कर्षमात्रं तु बहु रक्तप्रशान्तये ॥४७॥

अर्थ—चावल के जल सरपोखा की जड़ पीस कर दशमाशे पीनेसे स्त्रियोंके रक्तका प्रवाह बन्द होजाता है ॥४७॥

दार्वीरसांजनवृषाब्दकिरातविल्व,
भल्लातकैरथ कृतो मधुना कषायः ।
पीतो जयत्यतिबलं प्रदरं सशूलं,
पीतं सितारुणविलोहित नील कृष्णम् ॥४८॥

अर्थ—घृत और सहद के साथ देवदारु, रसांजन चिरायता मिलाभा, अडूसा और नागर मोथा का क्वाथ (काढ़ा) पीने से बड़ासे बड़ा प्रशूल. पीत श्वेत, रक्त, नील और कृष्ण आदि सब प्रकार का प्रदर शान्त होता है ॥ ४८ ॥

अथ वन्ध्यात्वनाशनम् ।

समूलपत्रां सर्पाक्षीं रविवारे समुद्धरेत् ।
एकवर्णगवां क्षीरे कन्या हस्तेन पेषयेत् ॥४९॥
ऋतुकाले पिवेद्वन्ध्या पलार्द्धं तद्दिने दिने ।
क्षीरशाल्यन्यमुद्गं च लघ्वाहारं प्रदापयेत् ।
एवं सप्तदिनं कुर्यात् वन्ध्या भवति गर्भिणी ॥५०॥

अर्थ-रविवार के दिन पत्तोंके साहेव सर्पाक्षी (सुगन्धरा) की जड़ लाकर एक वर्णकी गौके दूधमें कन्या के हाथ से उसको पिसवा कर ऋतु कालमें पीने और पथ्यमें दूध, साठी चावल का भात, मूंग की दाल तथा शीघ्र पचने वाले आहार भोजन करने से वन्ध्या स्त्री गर्भवती हो जाती है ॥ ४९ ॥ ५० ॥

उद्वेगं भयशोकौ च दिवानिद्रां विवर्जयेत् ।
न कर्म कारयेत् किंचित् वर्जयेच्छीतमातपौ ॥५१॥
न तया परमां सेवां कारयेत् पूर्ववत् क्रियाम् ।
पतिसंगाद्गर्भलाभो नात्र कार्य्या विचारणा ॥५२॥

अर्थ-और औषधि के सेवन कालमें उद्वेग, भय शोक दिनमें शयन करना, अधिक परिश्रम, शीत, उष्ण और अधिक सेवा न करनी चाहिये । इस प्रकार नियम पूर्वक, औषधि का सेवन करने के पश्चात् पतिके प्रसङ्ग से वन्ध्या स्त्री अवश्य गर्भ धारण कर लेगी ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

मुस्तां प्रियङ्गुं सौवीरं लाक्षाक्षौद्रं समं पिवेत् ।
कर्षं तन्दुलतोयेन वन्ध्या भवति पुत्रिणी ।
पथ्यमुक्तं यथा पूर्वन्तद्वत् सप्त दिनं पिवेत् ॥५३॥

अर्थ—उपरोक्त रीतिसे मोथा, कांगनी, वैर, लाख और सहद् का समान भाग चावल के जलके साथ प्रति दिन दश दश मासे सात दिन तक पीनेसे वन्ध्या स्त्री पुत्रवती होती है ॥ ५३ ॥

सपिप्पली केशर शृंगवेर,
क्षुद्रोषणं गन्धघृतेन पीतं ।
वन्ध्यापि पुत्रं लभते हठेन,
योगस्तु सोऽयं विधिना मयोक्तः ॥५४॥

अर्थ—पीपल, केशर, अदरख और काली मिर्च को घृत में मिला कर पीने से वन्ध्या स्त्री को भी पुत्र होता है ॥ ५४ ॥

मूलं शिफा वा किल लक्ष्मणाया,
ऋतौ निपीय त्रिदिनं पयोभिः ।
क्षीरान्नचर्या नियमेन भुंक्ते,
पुत्रं प्रसूते वनिता विचित्रम् ॥ ५५ ॥

अर्थ-सफेद कटेली की जड़ और जटामासी के पत्ते को दूधमें पीस कर तीन दिन तक पीवे और दूध आदि हलका अहार भोजन करने से वन्ध्या स्त्री को पुत्र की प्राप्ति होती॥५५॥

तुरंगगन्धा घृतवारि सिद्धि-
माज्यं पयः स्नानदिने च पीत्वा।
प्राप्नोति गर्भं नियमं चरन्ती,
वन्ध्या च नूनं पुरुषप्रसंगात् ॥५६॥

अर्थ-असगन्ध को जलमें पका कर घृतमें भूँजले फिर दूध और घृतके साथ स्नान के दिन इसको पीये और नियम पूर्वक रहे तो वन्ध्या स्त्री अवश्य पुत्र वती हो ॥ ५६ ॥

कृष्णापराजिता मूलं वस्तक्षीरेण संपिवेत्।
ऋतुस्नाता त्रिघस्रंतु वन्ध्यागर्भधरा भवेत् ॥५७॥

अर्थ-ऋतुमें स्नाकरके काले विष्णु कान्ता की जड़को दूधमें पीस कर तीन दिन पीनेसे वन्ध्या स्त्री गर्भ धारण कर लेती है ॥ ५७ ॥

नागकेशरकं चूर्णं नूतनाद्गव्यदुग्धतः।
पिवेत्सप्त दिनं दुग्धं घृतैर्भोजनमाचरेत्।
तद्दतौ लभते गर्भं सा नारी पतिसंगता ॥५८॥

अर्थ-तुरन्त के दूहे हुए दूधमें नाग केशर का चूर्ण मिलाकर सात दिन तक पीने से और दूध घृत का भोजन

करने से रहने से वन्ध्या स्त्री पतिके प्रसङ्ग से गर्भ धारण कर लेती है ॥ ५८ ॥

तिलरसगुडचैकं गोपुरीपाग्नियोगा-
त्तरुणवृषभमूत्रं प्रस्थयुक्तंविपक्वम् ।
ऋतुदिवसविमध्ये सप्तवारं च पीतं
जनयति सुसमेतन्निःश्चितं पुष्पितैव॥५६।

अर्थ–युवा भैंसके एक सेर मूत्रमें तिल, रस और गुड़ मिला कर गौके गोबर के कण्डे पर पकावे और ऋतु काल के दिन सात बार पीवे तो वन्ध्या स्त्री, पुष्पिता के समान अवश्य पुत्र प्रसव करे ॥ ५६ ॥

कदम्बपत्रं श्वेतं च वृहतीमूलमेव च ।
एतानि सम भागानि ह्यजाक्षीरेण पेषयेत्॥६०॥
त्रिरात्रं पञ्चरात्रं वा पिबेदेतन्महौषधम् ।
निपीयमाने तुतदागर्भो भवति निश्चितम्॥६१॥

अर्थ–कदम्बके पत्र, सफेद चन्दन, और कटेली की जड़ का समान भाग बकरी के दूधमें पीस कर ऋतु कालमें तीन रात्रि अथवा पाँच रात्रि तक पीने वन्ध्या स्त्री अवश्य गर्भ-वती होती ॥ ६० ॥ ६१ ॥

विष्णुक्रान्ता समूलं तु पिष्ट्वा दुग्धेषु माहिषैः ।
महिषीनवनीतेन ऋतुकाले तु भक्षयेत् ॥६२॥
एवं सप्तदिनं कुर्यात् पथ्यमुक्तं च पूर्ववत् ।
गर्भं सा लभते नारी काकवन्ध्या सुशोभनम् ॥६३॥

अर्थ-भैंसके दूधसे जड़ सहित विष्णु क्रान्ता को पीस कर और भैंसही के साथ जो काक वन्ध्या स्त्री ऋतु, काल में सात दिन तक भक्षण करै और पहिले कही हुई रीति से पथ्य करैतो स्त्री अवश्य गर्भिणी हो ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

गर्भे संजातमात्रे तु पक्षान्मासा च वत्सरात् ।
म्रियते द्वित्रिवर्षायस्याः सा मृतवत्सका ॥६४॥

अर्थ-जिस स्त्री के बालक जन्म लेते ही, एक पक्ष, एक-मास, एकवर्ष अथवा दो वर्षमें मर जाते हैं उसको मृतवत्स कहा जाता है ॥ ६४ ॥

प्राङ्मुखा कृत्तिकर्क्षे तु वन्ध्यां कर्कोटकीं हरेत् ।
तत् कन्दं पेषयेत्तोयैः कर्षमात्रं सदा पिबेत् ।
ऋतुकाले तु सप्ताहं दीर्घजीवी सुतो भवेत् ॥६५॥

अर्थ--अब मृत वत्सा स्त्रीकी चिकित्सा वर्णन की जाती

है । रविवारके दिन कृत्तिका नक्षत्र में पूर्व मुख होकर कर्कोटकी अर्थात् पीतपुष्पा को उखाड़ लावे फिर जड़को पानी मे पीस कर ऋतुकालमें सात दिन तक दशदश माशे पीने से दीर्घायु पुत्र का जन्म होता है ॥ ६५ ॥

यावीजपूष्प द्रुममूलमेकं,
क्षीरेण सिद्ध हविषा विमिश्रम् ।
ऋतौ तु पीत्वा स्वपतिं प्रयाति,
दीर्घायुषं सा तनयं प्रसूते ॥ ६६ ॥

अर्थ--जो स्त्री ऋतुकालमें बीजपुर [एक पुराना नीबू] की जड़ को दूधमें सिद्धकर और उसमेंहविष मिलाकर उसको पान करके अपने पतिसे प्रसङ्ग करे वह दीर्घ जीवी पुत्रका जन्म दे अर्थात् उसको दीर्घायु पुत्र उत्पन्न हो ॥ ६६ ॥

अथ गर्भस्तंभनम् ।

अकस्मात् प्रथमे मासे गर्भे भवति वेदना ।
गोक्षीरैः पेषयेत्तुल्यं पद्मकोशीरचन्दनम् ॥ ६७ ॥
पलमात्रं पिवेन्नारी त्र्यहाद्गर्भःस्थिरो भवेत् ।
अथवा मधुकं दारु शावृकक्षस्य वीजकम् ।

सम्पिष्य क्षीर काकोलीं पिवेत्क्षीरः स्तुगोभवैः॥६८॥

अर्थ—यदि गर्भिणी को अकस्मात् पहिले महीने में पीड़ा उत्पन्न हो तो पद्माख, खस और लाल चन्दन का समान भाग गौके दूधमें पीसकर एक एक पल तीन दिन तक उसे पिला पिला देनेसे गर्भका स्तंभन हो जाता है। अथवा देवदारु। मुलेठी, सिरिसका बीज और क्षीर काकोली को गौ के दूधमें पीस कर पिला दे॥ ६७॥ ६८॥

नीलोत्पलं मृणालं च यष्टिकर्कटशृंगिकौ।
गोक्षीरैस्तु द्वितीये च पीत्वा शाम्यति वेदना॥६९॥

अर्थ—नीले कमल की जड़, मुलहठी और ककरासिंगी का समान भाग गौके दूधमें पीस कर पिलादेने से दूसरे महीने की गर्भ वेदना शान्त हो जाती॥ ६९॥

अथवाश्वत्थवल्कं च तिलं कृष्णं शतावरीम्।
मंजिष्ठासहितं पिष्ट्वा पिवेत्क्षीरैश्चतुर्गुणैः॥७०॥

अर्थ—अथवा पीपल की छाल, काला तिल शतावर पिला दे तो भी वेदना शान्त हो जाय॥ ७०॥

श्रीखण्डं तगरं कुष्टं मृणालं पद्मकेशरम्।

पिबेच्छीतोदकैः पिष्टं तृतीये वेदनावति ।
अथवा क्षीरकाकोलीं वलां पिष्ट्वापयः पिबेत्॥७१॥

अर्थ-तीन मास की गर्भवती स्त्री को गर्भपीड़ा हो तो चन्दन तगर कूट कमल की जड़ और पद्मकेशर अथवा क्षीर काकोली और सुगन्ध वाला पीस कर ठण्डे जल के साथ पिला देने से वेदना शान्तहो जाता है ॥ ७१ ॥

नीलोत्पलं मृणालानि गोक्षुरं च कशेरुकम् ।
तुर्य्य मासे गवां क्षीरः पिबेच्छाम्यति वेदना॥७२॥

अर्थ-नील कमल और कमल की जड़ गोखरु औरकसेरु को पीस कर गौ के दूध के साथ पिला देने से चौथे मास की गर्भ पीड़ा शान्त हो जाती है ॥ ७२ ॥

पुनर्नवाथ काकोली तगरं नीलमुत्पलम् ।
गोक्षुरं पंचमे मासे गर्भक्लेशहरंपिबेत् ॥ ७३ ॥

अर्थ-पुनर्वा काकोली तगर नील कमल और गोखुरु गौ के दूध के साथ पीने से पांचवें मास की गर्भ पीड़ा छूट जाती है ॥ ७३ ॥

सितां कपित्थमज्जां च शीततोयेन पेषयेत् ।

षष्ठे मासि गवांक्षीरैः पिबेत्क्लेशनवृत्तये॥७४॥

अर्थ-छठवें मास को गर्भ वेदना दूर होने के लिये ठण्डे जल में कैतकी गुद्दी और मिश्री मिला कर गौ के दूध के साथ पीना चाहिये ॥ ७४ ॥

कशेरुं पौष्करं मूलं शृंगाटं नीलमुत्पलम् ।
पिष्ट्वा च सप्तमे मासि क्षीरैः पीत्वा प्रशाम्यति॥७५॥

अर्थ-कसेरू पोहकर की जड़ सिंघाड़ा और नीलकमल एक में पीसकर पीने से सातवें मास को गर्भ वेदना शान्त हो जाती है ॥ ७५ ॥

यष्टिं पद्माक्षमुस्तं केशरं च गजपिप्पली ।
नीलोत्पलं गवां क्षीरैः पिबेदष्टममासके ॥७६॥

अर्थ-मुलहठी पद्माख मोथा केशर गजपीपल और नील कमल को गौ के दूध के साथ आठवें महीने की गर्भ पीड़ा में पीना चाहिये ॥ ७६ ॥

विशालबीजकं कोलं मधुना सहपेषयेत् ।
वेदना नवमे मासि शान्तिमाप्नोति नान्यथा ॥७७॥

अर्थ-इन्द्रायन का वीज और शीतल चीनी सहद के साथ पीने से नव मास की वेदना शान्त होती है। इस में सन्देह नहीं है ॥ ७७ ॥

शर्करी गोस्तनी द्राक्षा सक्षौद्रं नीलमुत्पलम् ।
पाययेद्दशमे मासि गवां क्षीरैः प्रशान्तये ॥७८॥

अर्थ-दशवें मास की पीड़ा शान्त होने के गौ के दूध के लिये मिश्री मुनक्का छोहाड़ा सहद और नील कमल को गौ के दूधके साथ पिलाना चाहिये ॥ ७८ ॥

अथवा सुंठिसंसिद्धं गोक्षीरं दशमे पिवेत् ।
अथवा मधुकं दारु सुण्ठीं क्षीरेण संपिवेत् ॥७९॥

अर्थ-अथवा सोंठ से सिद्ध किया हुआ दूध या गौ के दूध के साथ मुलहठी देवदारु और सोंठ पिलाना चाहिये ॥ ७९ ॥

धान्यंजनं सावश्यष्टिकारण्यं,
क्षीरर्निपीतं प्रमदा हठेन ।
सप्ताहमात्रं विनियोज्य नारी,
स्तम्भानि गर्भं चलितं न चित्रम् ॥८०॥

अर्थ-जो स्त्री एक सप्ताह तक नियम करकेआ वला सेवि-

रांजन लोध और मुलहठी को गौ के दूध के साथ पीती है उस का गर्भ स्थिर हो जाता है और फिर नही हिलता ॥ ८० ॥

कुलालहस्तोद्भवकर्दमस्य,
वत्सीपयः क्षौद्रयुतस्य मात्रम् ।
गर्भच्युतिं शूलमयीं निवार्य
करोति गर्भं प्रकृतं हठेन ॥ ८१ ॥

अर्थ—कुम्हार के हाथ की लगी हुई चाक पर की मिट्टी बकरी के दूध में मिलाकर पीने से गर्भ की पीड़ा शान्त हो जाती है और गर्भ कदापि नहीं गिर सकता ॥ ८१ ॥

कशेरुशृंगाटकजीरकाणि,
पयोधनैरंडशतावरीभिः ।
सिद्धं पयश्शर्करया विमिश्रं.
संस्थापयेद्गर्भमुदीत्य शूलम् ॥ ८२ ॥

अर्थ—कसेरू सिंहाड़ा जीरा नागरमोथा रेड़ी और शतावर से सिद्ध किये हुए दूध में सहद मिलाकर पीने से गर्भ की पीड़ा छूट जाती है और गर्भ भी स्थिर हो जाता है ॥ ८२ ॥

कन्दंकौमुपकस्य माक्षिकयुतं क्षीराज्यमिश्रंपिवेत्

सप्ताहं सितया सुपक्वसनला शीतीकृतं वायुना।
गर्भस्रावमरोचकं सपवनं शोफं त्रिदोषंवमिं,
शूलं सर्वविधं निहन्ति नियमादेवं चयत्तत्स्मृतम् ८३

अर्थ–दूध में कोई की जड़ सहद और घृत मिलाकर औटा ले फिर उसको ठण्डा करके विधि पूर्वक अर्थात् पहिले कही हुई रीति से सातदिन तक पीने से. गर्भस्राव अरुचि वातरोग सूजन त्रिदोष चमकना और पीड़ा आदि ये सम्पूर्ण रोग नष्ट हो जाते हैं ॥ ८३ ॥

कुवलयं सतिलं पीत्वा क्षीरेण मधुसितायुक्तम् ।
गुरुतरदोषैश्चलितं गर्भसंस्थापयेदाशु ॥ ८४ ॥

अर्थ–दूध में कुवलय (कमलकन्द) तिल मिश्री और सहद मिलाकर पीने से गिरता हुआ गर्भ तुरन्त रुक जाता है ॥ ८४ ॥

ह्रीवेरातिविषा मुस्ता मारिचं संभृतं जलम् ।
दद्याद्गर्भे प्रचलिते प्रदरे कुक्षितद्यपि ॥ ८५ ॥

अर्थ–ह्रीवेर अतीस मोथा और मिर्च का जल अर्थात् काढ़ा देने से गर्भ के रोग नष्ट हो जाता है ॥ ८५ ॥

अथ गर्भशुष्कनिवारणम् ।

गोक्षीरं शर्करायुक्तं गर्भशुष्कप्रशान्तये ।
पिबेद्वा मधुकं चूर्णं गंभारीफलचूर्णकम् ।
समांसं गव्यदुग्धेन गुर्विण्या हि प्रशान्तये ॥८६॥

अर्थ–गौ के दूध में शक्कर मिलाकर पीने से गर्भ का सूजना रुक जाता है । गम्भारी फल का चूर्ण शहद में मिला कर पीने से और केवल गौ का दूधही पीने से भी गर्भ का सूजना बन्द हो जाता है ॥ ८६ ॥

—:※:—

अथ सुखप्रसवमाह ।

श्वेत् पुनर्नवामूलं चूर्णं योनौ प्रवेशयेत् ।
क्षणात् प्रसूतये नारी गर्भेणातिप्रपीडिता॥८७।

अर्थ—प्रसव काल में स्त्रीको पीड़ा हो तो सफेद पुनर्नवा की जड़ का चूर्ण योनि में रख देने से तुरन्त प्रसव हो जाता है और किसी प्रकार की पीड़ा नहीं होती ॥ ८७ ॥

दशमूलीशृतं तोयं घृतसैन्धवसंयुतम् ।
शूलातुरा पिबेन्नारी सासु खेन प्रसूयते ॥८८ ॥

अर्थ—दशमूल के काढ़ा में घृत और सेंधा लवण मिला कर पी लेने से सुख पूर्वक प्रसव होता है ॥ ८८ ॥

मन्त्रः।

॥ ओं मन्मथः ओं मन्मथः ओं मन्मथः मन्मथ वाहिनी लम्बोदर मुंच मुंच स्वाहा ॥

अनेन मन्त्रेण।जलंसुतप्तं,
पातुं प्रदेयं शुचिता नरेण।
तोयाभिपानात्खलु गर्भवत्या,
प्रसूयते शीघ्रतरं सुखेन ॥ ८९ ॥

विधि।—पवित्र होकर उपरोक्त मन्त्र से गरम जल अभिमन्त्रित करके प्रसूती स्त्री को पिला देने सुखपूर्वक और तुरन्त प्रसव हो जाता है।

अथ नष्टपुष्पायाः पुष्पकरणम्।

लांगलीकन्दचूर्णं वा मूलं वाऽपामार्गजम्।
इन्द्रवारुणिकामूलं योनिस्थं पुष्पबन्धनुत् ॥ ९० ॥

अर्थ—कलिहारि कन्द का चूर्ण और चिचिरा अथवा इन्द्रायन की जड़की पोटरी बना कर योनि में रख लेने से बन्द होगया रज फिरसे होने लगता है ॥ ९० ॥

तिलमूलंकषायन्तु ब्रह्मदण्डीयमूलकम्।
यष्टी त्रिकटुकं चूर्णं क्वाथयुक्तं च पाचयेत्।
पुष्परोध रक्तगुल्मे स्त्रीणां सद्यः प्रशास्यते ॥९१॥

अर्थ—तिलकी जड़के काढ़े में ब्रह्मदण्डी की जड़ मुलहठी, सोंठ, मीर्च और पीपल का चूर्ण पका कर पीवे स्त्रीका रुका हुआ रज और रक्त गुल्म ये दोनों रोग अच्छे हो जाते हैं ॥ ९१ ॥

ज्योतिष्मतौ कोमलपत्रमग्नौ
भ्राष्टं जपायाः कुसुमं च पिष्टम्।
गृहांबुना पीतमिदं युवत्या,
करोति पुष्पं स्मरमन्दिरस्य ॥ ९२ ॥

अर्थ—माल कांगनी के कोमल पत्ते को अग्नि पर भून कर और दुपहरिया के फूलके साथ पीस कर पीने से नष्ट हो गया रज फिर से होने लगता है ॥ ९२ ॥

एतत्ते कथितं वत्स तन्त्रमुड्डीशमुत्तमम् ।
यस्मैकस्मै न दातव्यं रक्षणीयं प्रयत्नतः ॥६३॥

अर्थ—श्री शिवजी बोले कि, हे वत्स ! यह उत्तम उड्डीशतन्त्र मैंने तुमसे वर्णन कर दिया । इसको न बताना चाहिये और यत्न पूर्वक इसकी रक्षा करनी चाहिये ।

इति श्री उड्डीशतन्त्रे रावणेश्वर संवादे भाषाटीकायां भूत ५ करणादि वर्णनं नाम दशमः पटलः समाप्तः ॥ १० ॥

सूचीपत्र

सारस्वत	।=)	तिथिनिर्णय
संस्कृत प्रवेशिनी	=	तर्पण
अमरकोष	॥)	दशकर्म पद्धति
एकोद्दिष्ट श्राद्ध मूल	-)	प्रेत मञ्जरी मूल
,, ,, सटीक	=)	,, ,, भाषा टीका
गोदान	)॥	पार्वण मूल
गणपति पूजा	-	,, भाषा टीका
जनेऊ पद्धति	=	अशौचनिर्णय
मूल शान्ति	/	होम पद्धति
वाशिष्ठी हवन पद्धति	=)॥	हरदी मातृ पूजा
समंत्रक ग्रह शांति प्रयोग	॥।)	शनैश्चर कथा
कौशिल गायत्री	।)	यजुर्वेदीय सन्ध्या भा.

पुस्तक मिलने का पता—

मैनेजर–भार्गव पुस्तकालय,

गायघाट, बनारस